रु० ६/-

फाल्गुन-चैत्र २०५७-५८ मार्च २००१

स्वदेशी पत्रिका

राष्ट्रीय स्वाभिमान, आर्थिक स्वावलंबन, राष्ट्रीय पुनर्रचना तथा स्वदेशी संदेश की संवाहिका

संस्कृति की सही समझ देता है शास्त्रीय संगीत

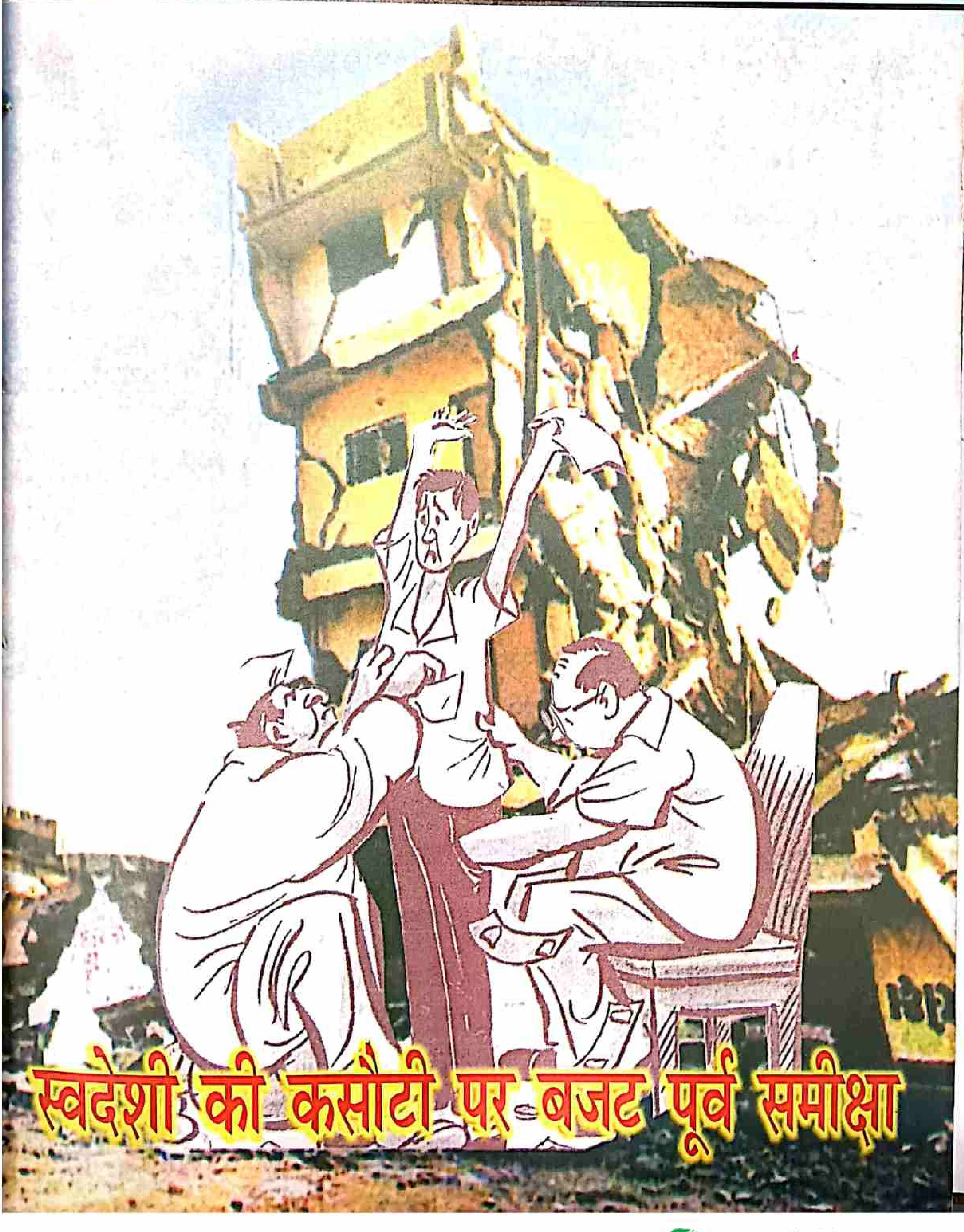

स्वदेशी की कसौटी पर बजट पूर्व समीक्षा

Scanned with OKEN Scanner

खड़ा कारोबार

• पारिजात पुष्प

दिखावे से पैसे तक
खड़ा करोबार,
पेंच से पावर तक
चलती सरकार,
ढोता है रोज दिन
दौड़ता अखबार –
सट्टे पर पट्टे
जान–जिस्म – जमीन के,
क्यों लिख रहें हैं आज
कौड़ी में तीन के ?
दे–देकर त्रास भूख–प्यास
कह रह है आप
लो, कर दिया विकास।
देख–देख
दंग हुआ – तंग हुआ
इनका बाजार।
हैं नहीं इनके जब
सच्चे सरोकार
सोंच रहा
कहाँ जाए –
अब जनहित–जनाधार ?

आओ विपदा में साथ निभाएँ

• महेश पाण्

भग्न जन–जीवन स्वर्ग बनाएँ।
आओ, विपदा में साथ निभाएँ।।
छाया भूकम्प का घोर अँधेरा।
उजड़ा भाई का रैन–बसेरा।।
बिखरे–कुचले घर पुनः बसाएँ।
आओ, विपदा में . . . .

दोनों हाथों से दे–देकर धन।
भारत माँ का सींचे उपवन।।
फिर से जीवन का साज सजाएँ।
आओ, विपदा में . . . . .

राजा बलि–शिवि–कर्ण महान।
पुरु–दधीचि के हम संतान।।
वंशज भामा के धर्म निभाएँ।
आओ, विपदा में . . . . .

दानवीर पुरखों की आन।
निज का रखना है अभिमान।।
गैरों के दर पर सिर न झुकाएँ।
आओ, विपदा में . . . . .

देख रही माँ हमें भारती।
कोटि–प्राणों की एक आरती।।
हम सब मिलकर आज जलाएँ।
आओ, विपदा में . . . . .

Scanned with OKEN Scanner

अपनी वार्ता

प्रिय पाठकवृन्द,

आनेवाले बजट के पाँवों की आहट से ऐसा लगता है कि स्वदेशी की अपेक्षाएँ दुखेंगी। अब की बार के अग्रलेख में बजट पूर्व समीक्षा स्वदेशी के पैमाने पर की गई है। इस अंक में प्रधानतः आर्थिक ध्वनियों के साथ स्वदेशी संस्कृति की त्रिविधि चेतना भी मुखर है। वेलेन्टाइन डे को तोड़ता हुआ लेख कौमुदी महोत्सव, स्वदेशी अर्थ चिंतन का प्राचीन आधार, भूकंप के संदर्भ में प्राचीन भारत का भू-वैज्ञानिक सिद्धांत एवं अन्य महत्वपूर्ण लेखों सहित यह अंक आप पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो रहा है। आशा है, आप पसंद करेंगे।

वर्ष प्रतिपाद (१ शुक्लपक्ष चैत्र २०५८) के पावन अवसर पर नववर्ष की कोटि-कोटि शुभेच्छाएँ स्वीकार करें।

नमस्कार

आपका

प्रमोदकुमार दुबे

अनुक्रम

अग्रलेख

स्वदेशी की कसौटी पर बजट पूर्व समीक्षा
प्रमोद दुबे........................../७

आखिरी क्यों लगता है अमरीकी दबाव का आरोप?
अवधेश कुमार......................../१३

लेख

विश्व व्यापार संगठन और भारत को क्या कार्यभाग अदा करना चाहिए
रुद्रदत्त............................../१६

भारत की कृषि को हथियाने का विदेशी-तकनीकि
देवेंद्र शर्मा........................../१९

किसान को गाय क्यों नहीं रास आती है
डॉ. भरत झुनझुनवाला................/२१

स्वदेशी अर्थ चिंतन का प्राचीन आधार
अतुल रावत......................../२३

संस्कृति

संस्कृति की सही समझ देता है शास्त्रीय संगीत
डॉ. प्रमोदकुमार दुबे................../२५

कौमुदी महोत्सव
डॉ. कामेश्वर उपाध्याय................./३२

स्तंभ

खेत की मेंड़ से/६, समाचार परिक्रमा/४४

संपादकीय कार्यालय : ६०, नार्थ एवेन्यू, नई दिल्ली-११० ००१ • दूरभाष : ३०१८१७५

ई-मेल : swadeshisampark@rediffmail.com

स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–६, अंक–६

फाल्गुन–चैत्र २०५७, मार्च, २००१

:: अमर वाणी ::

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया है, जिस जगदीश्वर ने दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है, जैसे आकाश में सब लोक-लोकांतरों में पक्षी उड़ते हैं, वैसे ही वह सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुखदायक, कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें।

• • •

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥

हे सब प्रजा के स्वामिन् परमात्मन्! आपसे भिन्न कोई इन सब उत्पन्न हुए जड़, चेतनादिकों का तिरस्कार नहीं कर सकता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग आपका आश्रय लेवें और इच्छा करें, वह-वह हमारी कामना सिद्ध होवे, जिससे हम लोग धनैश्वर्य के स्वामी हों।

(भक्ति दर्पण)

मुख्य संपादक :
डॉ. महेश चंद्र शर्मा

कार्यकारी संपादक :
डॉ. प्रमोदकुमार दुबे

मूल्य : एक अंक - ६ रुपए
वार्षिक सदस्यता शुल्क - ६० रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्क - १०००/-

विशेष सूचना : अपनी सदस्यता सूची एवं सदस्यता फार्म कृपया अपना नाम व पता, पिनकोड सहित साफ-साफ शब्दों में लिखकर भेजें।

Scanned with OKEN Scanner

पुन: स्मरणार्थ

दिनांक २२ नवंबर, १९९१ को रेशम बाग, नागपुर में श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी जी की अध्यक्षता में स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना - बैठक संपन्न हुई थी। बैठक के बाद श्री ठेंगड़ी जी ने एक साथ निम्न चार घोषणाएँ की थी:–

१ आज स्वदेशी जागरण मंच की स्थापना हो रही है।

२ स्वदेशी जागरण मंच यह मांग करता है कि इसके बाद मार्केट में आने वाली वस्तु की उत्पाद लागत (Cost of Production) घोषित होनी चाहिए, ऐसी कानूनी व्यवस्था हो, ताकि किसी भी उद्योग से या क्षेत्र से विदेशी कंपनी के हटने के बाद उस स्थिति का लाभ उठाकर देशी पूंजीपति अपने स्वभाव के अनुसार उपभोक्ताओं का शोषण न कर सके।

३ उपभोक्ताओं का शोषण न हो, इसकी पूरी व्यवस्था होने के बाद भी यदि कुछ उद्योगों में देशी वस्तुएं विदेशी वस्तुओं की तुलना में कम गुणवत्ता (Quality) की और अधिक कीमत वाली आती है तो गुणवत्ता कम और कीमत थोड़ी अधिक इस बात के लिए सर्वसाधारण नागरिकों को तैयार रहना चाहिए। यह देशभक्ति की कीमत (Cost of Patriotism) मानी जाए।

४ स्वदेशी जागरण मंच बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आर्थिक साम्राज्यवाद को पूरी तरह से हटाने तक लगातार स्वदेशी का संघर्ष जारी रखेगा।

उन्होंने कहा

हमें कम से कम सुविधाओं में जी[ने] की कोशिश करनी चाहिए ताकि ह[म] अपने लिए अधिक से अधिक स्वतंत्र[ता] का स्पेस बना सकें।

साहित्य[कार]
श्री निर्मल व[र्मा]

स्वदेशी को स्वराज की अवधारणा [से] अलग नहीं किया जा सकता [...] शक्तिशाली विचार को प्रतिपादित क[र] गाँधी जी ने देशवासियों और विदेशि[यों] को समझा दिया था कि भारत [का] आंदोलन सिर्फ राजनीतिक स्वतंत्रता [के] लिए नहीं बल्कि सामाजिक और आर्थि[क] मुक्ति के लिए था जो भारतीय विक[ास] के नमूने पर निर्भर था।

प्रधान[मंत्री]
श्री अटल बिहारी वाजपे[यी]

संतुलित विकास और अमीर-गरीब [के] बीच की खाई को पाटने के लि[ए] उत्पादन और उपभोग के तौर-तरीकों [में] व्यापक सुधार लाने की आवश्यकता [है]।

मानव संसाधन-विकास मं[त्री]
डॉ. मुरली मनोहर जोश[ी]

कृषि व घरेलू व लघु उद्योगों [को] संसाधन मुहैया कराकर अब तक ग्रामी[ण] अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपू[र्ण] भूमिका निभाने वाले सार्वजनिक बैं[क] उद्योग के पर काटे जा रहे हैं।

आई बोक के राष्ट्रीय अध्य[क्ष]
श्री शांता राजु

असली भारतीय कंपनी वही कहलाएगी जो देश के लिए दौलत और रोजगार पैदा करें।

महेन्द्रा एण्ड महेन्द्रा के प्रबंध निदेशक
श्री आनंद महेन्[द्रा]

Scanned with OKEN Scanner

स
पा
द
की
य

आर्थिक सुधार का सही मार्ग

देश में **आर्थिक सुधार** के कार्यक्रमों को प्रश्रय मिले - इस आकांक्षा की प्रतिध्वनि आने वाले बजट के पदचापों से सुनाई दे रही है। ऐसे में सरकार के आर्थिक सुधार की अवधारणा को परखना आवश्यक है। कहीं आर्थिक सुधार के नाम पर **निरंतर घाटे की अर्थव्यवस्था, विदेशी धन पर निर्भरता, काले धन की वृद्धि, मुद्रास्फीति और स्वदेशी की उपेक्षा को आँकड़ों के सृजन में कागजी कुशलता** के साथ प्रस्तुत तो नहीं किया जा रहा? जिन्हें दशकों पहले राष्ट्र मनीषी पं. दीनदयाल उपाध्याय ने आर्थिक व्यवस्था की आलोचना के लिए बिन्दु बनाए थे। पंडितजी ने अर्थनीति की समीक्षा के संदर्भ में लिखा था कि **देश का दारिद्रय दूर होना चाहिए, इसमें दो मत नहीं: किन्तु प्रश्न यह है कि यह गरीबी कैसे दूर हो? हम अमेरिका के मार्ग (पूँजीवाद) पर चलें या रूस (तत्कालीन कम्यूनिस्ट रूस) के मार्ग को अपनावें अथवा यूरोपीय देशों का अनुकरण करें? हमें इस बात को समझना होगा कि इन देशों की अर्थव्यवस्था में अन्य कितने भी भेद क्यों न हो, इनमें एक मौलिक साम्य है।** इस कथन में विदेशी अर्थव्यवस्था का मौलिक साम्य यही है कि इनके यहाँ किसी न किसी रूप में अर्थ का केन्द्रीकरण है, उपभोग की निरंकुशता है और प्रकृति का विरोध भी। स्वदेशी की अर्थदृष्टि देश के अधिकतम जनता के हितों पर टिकी हुई है। पंडितजी का कथन है, **'कुटीर उद्योगों को भारतीय अर्थनीति का आधार मानकर विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का विकास करने से ही देश की आर्थिक प्रगति संभव है।'**

जापान और चीन जैसे देशों की उन्नति में लघु उद्योगों की सुव्यवस्था अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारण है। इसी से उन्होंने अपने देश के सर्वाधिक श्रम और प्रतिभा का उपयोग कर बेरोजगारी पर काबू पाया है और श्रेष्ठ उत्पादन से विश्व बाजार पर अपनी पकड़ भी बनायी है। यही मार्ग राज्य व्यवस्था की जनतांत्रिक संरचना की सुरक्षा के लिए भी सहयोगी हो सकता है। पंडितजी का यह कथन कि **पूँजीवादी अर्थव्यवस्था पहले आर्थिक क्षेत्र पर अधिकार जमाकर फिर परोक्ष रूप से राज्य पर अधिकार करती है तो समाजवाद राज्य को ही सम्पूर्ण उत्पादन का स्वामी बना देता है। दोनों व्यवस्थाऐं व्यक्ति के प्रजातांत्रिक अधिकार एवं उसके स्वस्थ विकास के प्रतिकूल है** - आर्थिक विकास की एक सुनिश्चित दिशा ही नहीं, जनतंत्र की रक्षा का एकमात्र मार्ग भी इंगित करता है। यह नहीं सोचना चाहिए कि समाजवादी व्यवस्था के पतन के बाद पूँजीवाद के अतिरिक्त और कोई मार्ग बचा ही नहीं। हमारे पास आर्थिक विकास का एक सुविचारित और आप्त वचन की तरह सिद्ध मार्ग है।

भूमंडलीकरण के नवोदित वातावरण में यह विकास मार्ग कड़ी स्पर्धा को जीते के लिए अपर्याप्त नहीं हो सकता। यदि इसे सुव्यवस्थित ढंग से सबलता प्रदान किया जाए। सभी विकसित देश भी अपनी कृषि और लघु उद्योगों को प्रश्रय देते हैं। और इसी क्षेत्र में एकाधिकार का सबसे अधिक द्वंद्व भी है। कुछ दिनों पूर्व यूरोपीय देशों ने अमरीकी चावल के बाजार को भारतीय उपमहाद्वीप के चावल को प्रश्रय देकर गिरा दिया था। जिसका रोना लेकर विश्व व्यापार संगठन की अदालत में अमरीका पहुँचा। इन दिनों कई देश चावल के बाजार पर अधिकार का प्रयास कर रहे हैं। साथ ही अमरीका की मनमानी की प्रतिक्रिया में दूसरा विश्व व्यापार संगठन के बनने की संभावना भी खबरों से व्यक्त हुई है। यह नई रचना द्वंद्व को आगे बढ़ाकर विकासशील देशों को ऐसा अवसर दे सकती है जिसमें इनकी अपनी शर्तें पर लाभ मिल सकता है। ऐसी परिस्थिति में कृषि एवं लघु उद्योग क्षेत्र को पराश्रित बनाना उचित नहीं है।

आर्थिक सुधार की अवधारणा यदि इनकी उपेक्षा करती है तो कहना होगा कि मूल्य उन्मुखता से केन्द्रित अर्थव्यवस्था का वर्चस्व बढ़ेगा और पूँजीवाद के सारे लक्षण प्रकट होंगे। इसके बाद बढ़ेगी आर्थिक दुर्व्यवस्था, भुखमरी, बेरोजगारी। चूँकि मनुष्य जीने की इच्छा रखता है, विद्रोह की आग भी जल उठेगी। स्वदेशी अर्थदृष्टि की उपेक्षा से उत्पन्न दुष्परिणाम किसी भ्रामक वाग्-जाले से नहीं, वैकल्पिक परिवर्तन से ही दूर होंगे।

Scanned with OKEN Scanner

खेत की मेड़ से ■ *मोहन सिंह*

दूसरी स्वतंत्रता का संघर्ष सिर पर है

संसद में बैठकर अथवा संसद से निकल सड़क पर आने-जाने भर से किसानों की हालत की वास्तविक जानकारी नहीं मिल जाती, सड़क को भी छोड़ना होगा, और खेतों की मेड़ पर जाना होगा तभी आप वह सच्चाई जान पाएँगे जिससे जिससे आज की आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षिक व्यवस्थाओं को चिन्तित होना चाहिए।

भारतीय कृषि को जब से कारपोरेट की नजर से देखा जाने लगा है, इसके लाभी को व्यवसायिक पैमाने से तौला जाने लगा है, विदेशी भूरी आँखों के साथ देशी कारपोरेटरों की टेढ़ी आँखों की चमक भी बढ़ने लगी है। सूट-बूट, टाई में कसे भारत के औद्योगिक घराने भी विदेशी कम्पनियों को खेती संबंधी मिलने वाले सरकारी प्रश्रयों को प्राप्त करना चाहते हैं। विदेशी हस्तक्षेप के बदले देशी हस्तक्षेप क्यों नहीं हो यह मानसिकता इसलिए उत्साहित हो रही है कि संसदी चेहरे भ्रम में हैं, इस भ्रम में कि वे धरती के उस वजूद को मनमाना उपयोग कर सकते हैं- कानून के अंकुश से जिसे पसीने से किसान सींचता रहा है। अँग्रेजों के जमाने में भी जमीन से जुड़े अधिकार की लड़ाई बड़ी मँहगी थी मनमानी खेती कराने की बाध्यता को अँग्रेज भी कुछ ही क्षेत्रों में लागू कर सके थे कई क्षेत्र ऐसे थे जहाँ न मुगल शासन लगान वसूल सका और न अँग्रेजी सरकार।

जातियाँ का परस्पर विभेद स्वतंत्रोत्तर भारत में राजनीतिक दंगलों से बढ़ा है, अँग्रेजों द्वारा काट-काट कर कमजोर की गई। भाषा-संस्कृति और धार्मिक आचारों की समानता से बननेवाली क्षेत्रीय ताकतें आज भी पुनर्गठित नहीं हैं। फिर भी भारत की मिट्टी को अपना एक मात्र आधार मानकर खेती और पशुधन पर जीवन-यापन करने वाले लोगों के वजूद को बाजार के बटखरे से तौलने की भूल नहीं करनी चाहिए। मेंड़ से घिरी कटठे भर खेत भी एक स्वायत्त राज्य होती है। उसकी रक्षा में भी खून बहता है।

विपरीत से विपरीत परिस्थितियों को शान्त भाव से सहता हुआ भारत का किसान यही समझता है कि देश की सीमा पर मेरा ही खून बह रहा है, देश की आन्तरिक रक्षा में मेरी ही संताने खड़ी है, प्राध्यापक, प्रशासक, नेता, पत्रकार सभी मेरे ही बेटे हैं ये लोग जो भी कर रहे होंगे भले के लिए ही कर रहें होंगे। ईश्वर और प्रकृति पर आस्थावान भारतीय किसान का मन बहुत बड़ा है भारत की सच्ची सम्प्रभुता इसी किसान में समाहित है। यह देश अमरिका की तरह कम्पनियों का देश नहीं है। कुछ दर्जन कम्पनियों के हाथों अमरीका की राज्य व्यवस्था बनती-बिगड़ती रहती है। अमरीका कम्पनियों का जनतान्त्रिक देश है। मगर भारत किसानों का जनतांत्रिक देश है। इस मूलभूत अन्तर को समझे बिना व्यापारी संगठनों से प्रभावित होनेवाली संसद यह कैसे समझ चुकी है कि भारतीय कृषि का नियामक वह स्वयं है और राजनीतिक दलों को चंदा देनेवाली कम्पनियों ने भी कैसे विश्वास कर दिया है कि वे संचालक शक्तियाँ बनाई है। विकास के नाम पर की गई हरित क्रांति के दुष्परिणामों पर विचार कर विकल्प खोजा गया है? पंजाब की खेतों की मिट्टी और पानी तक रासायनिक उर्वरक कीटनाशकों से बुरी दशा में हैं। यही स्थिति कमोवेश कई क्षेत्रों में देखी जा सकती है। खेती कोई सार्वजनिक उद्योग नहीं है कि इसकी आर्थिक परिस्थिति बिगाड़कर घाटे में पहुँचा दिया जाए और किसान खेत छोड़ देंगे और उसे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों या देशी कम्पनियों के हवाले कर देंगे।

सरकारी आँकड़ें बता रहे हैं कि खाद्यान उत्पादन अगले वर्ष के २० करोड़ ८९ लाख टन से घट कर १९ करोड़ ९० लाख टन हो गया है। तिलहन उत्पादन में एक करोड़ टन की कमी आई है। सरकार के अनुसार इस कमी को चिन्ताजनक नहीं कहा जा रहा है, क्योंकि देश के अनाज भण्डार में ४ करोड़ ३० लाख टन से अधिक अनाज है। सोचने की बात है कि क्या अनाज भण्डार में अनाज होने कारण पैदावार की कमी को चिन्ता का विषय नहीं माना जाना चाहिए? यह गफलत में रखनेवाली चालाकी है। वास्तविकता यह है कि तेल के अनावश्यक आयात से तेलहन की खेती प्रभावित हुई है। यहाँ तक कि नारियल की खेती भी प्रभावित हुई है। तेल उद्योग में लगे छोटे-बड़े सभी देशी व्यवसायी संगठन के प्रतिकूल प्रभावों को जानना हो तो कृषि विपणन संस्थाओं की दशा देखनी चाहिए। चालीस वर्षो से लाभ में चलनेवाला नेफेड आज रो रहा है। भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ (एन.सी.यू.आई.) के चेहरे पर चिन्ता की लकीरें खींची हुई हैं। मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटाने के लिए तैयार भारत के रहनुमाओं ने यह सोचा क्या कि हमने इस प्रकार की तैयारी नही की हैं। जिससे असुर देशों से मुकाबला किया जा सकता है। इस मुकाबले में शामिल विदेशी लड़ाके जिरह बख्तर पहन आधुनिक हथियार लेकर हमारे सामने आ रहे हैं। और हम घर की तमाम उलझनों से परेशान हैं।

अगर यह मुकाबला हो ही रहा है तो भी विश्वास कर लेना चाहिए कि यह साम स्पर्धा नहीं होगी, इसमें रेखीय गति भी नहीं बने इसमें बवंडर उठेगा। इसमें बहुत कुछ उजड़े इससे तय हो जाएगा कि देश की वास्तविक श का स्वरूप क्या है, और उसकी आकांक्षा क्या इन्हीं के आधार पर व्यवस्था बनेगी। अँग्रेजो उत्तराधिकार के रूप में विकसित हुई व्यवस्था इतिहास अलग प्रवृत्ति में वर्गीकृत करते हुए विराम लगा देगा, र उसके बाद हुए मूल ग स्वतंत्रता के दूसरे आन्दोलन का अध्याय शुरु क इसमें खलनायकों के चेहरे भी होंगे और नायक भी। किस चेहरे में कौन होगा इस का अ लोगों को स्वयं लगा कर सही रास्ते को चाहिए। जिन लोगों को भविष्य नहीं दिख रहा बिल्कुल तत्काल दिख रहा है उनसे कुछ कहा जा सकता है क्योंकि व लोग अपना उप लिख रहे हैं। उन्हें किसी इतिहास की चिन्ता

संभव है राजनीति या व्यवसायिक क्षेत्र की चिन्ता से अधिक तत्काल की चिन्ता में रहता हो पर ध्यान में रखने की बात है कि दूर तक नहीं दिखता, जो कुल प्रवाह में अस्तित्व का विचार नहीं रखता वह देश को उसके पूरे सजीव अस्तित्व में नहीं समझ स ऐसे लोगों के इतिहास पर विचार करना व्यर्थ

खेत की मेड़ एक समान दृष्टि से देख - कुल और देश की सीमाओं में रिनंतर प्रवाह देश-समाज के भविष्य को, और आर्थिक उ को भी। फैशन चैनल को बन्द नहीं करने आवाज पूँजीवाद के विरोधी, कम्यूनिस्ट भी रहें है: वेलेंटाइन डे के विरोध को भी ये लोग मान रहे हैं यदि ये लोग सामाजिक चरित्र की के लिए बनी वजना यानी मेड़ को गलब बता हैं तो साफ समझ लेनी चाहिए कि ये लोग अस्तित्व का भविष्य देखना नहीं चाहते। ठीक तरह मात्रात्मक प्रतिबन्ध भी एक मेड़ था - देश की आर्थिक उन्नति के लिए बनी मेड़ टू है वह। खुले बाजार में दंगल हो इसके लिए हटाया जा रहा है। देश की सीमा भी एक मे युद्ध विराम की घोषणा करने पर अमेरिका सरकार की पीठ थपकाता है। क्या इसलिए अमेरीका बड़ा शान्तिप्रिय है, वह शान्तिप्रिय समय का नहीं है वस्तुतः वह अस्तित्व देख भारत की मेड़े कमजोर देखना चाहता है। जो ऐसा चाहते हैं उनसे सावधान रहने की बात सिखा है खेत की मेड़।

Scanned with OKEN Scanner

स्वदेशी की कसौटी पर बजट पूर्व समीक्षा

■ प्रमोद दुबे

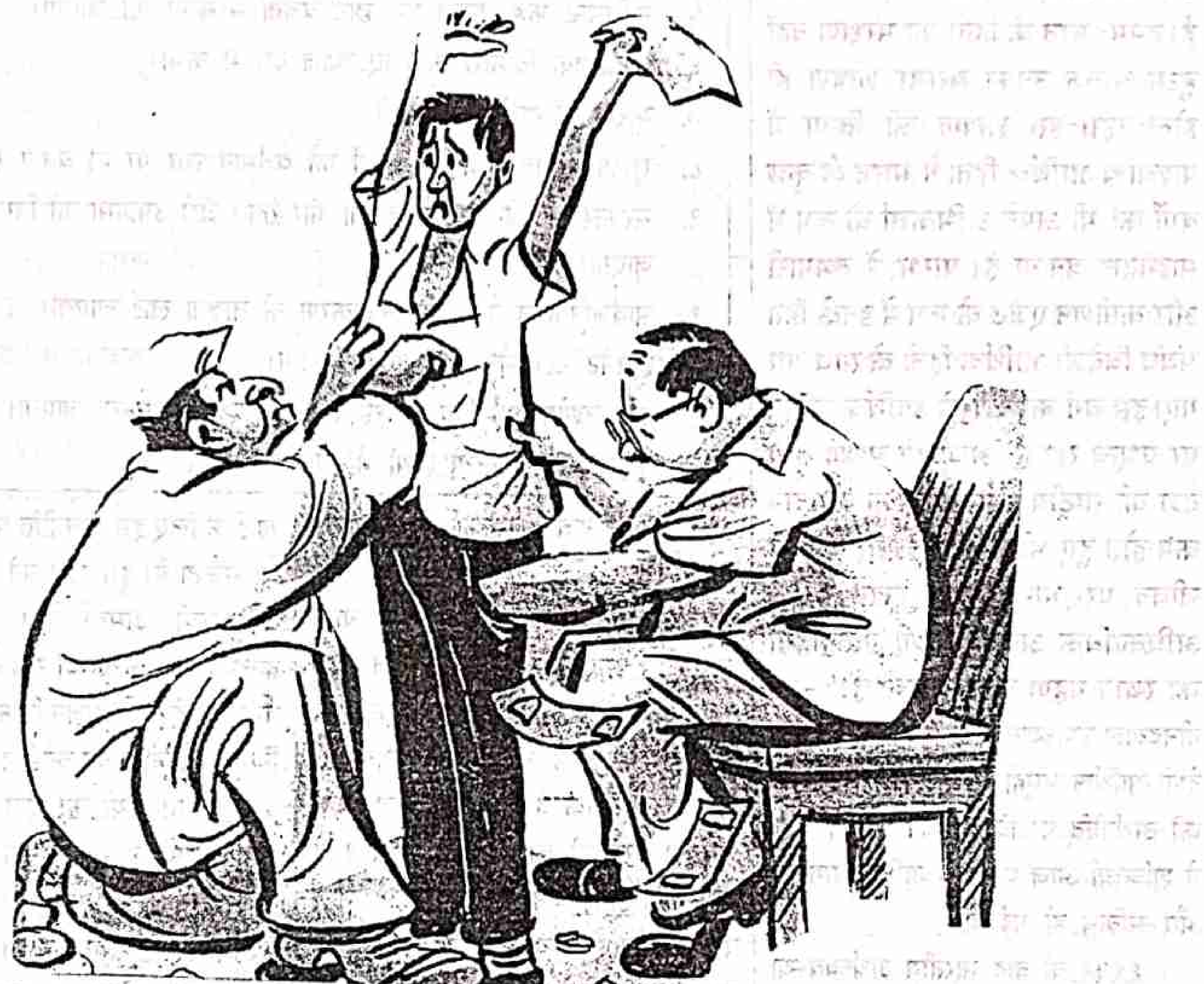

'जब नए कर लागू करने का प्रसंग आता है तो वित्तमंत्री तर्क प्रस्तुत करते हैं कि समाजवादी व्यवस्था में सर्वसाधारण व्यक्ति को असाधारण विकास-योजनाओं का बोझ सहना ही पड़ेगा; परंतु जब धनिकों की बिना परिश्रम के एकत्र की हुई कमाई अथवा अनुचित आय में से कटौती करने का प्रश्न उठता है तो प्रधानमंत्री ऐसा करना अस्वीकार कर देते है, क्योंकि उनके विचार से व्यक्ति की प्रेरणा समाप्त हो जाएगी। . . . .हमारे जनसेवकों एवं उद्योगपतियों के लिए वास्तव में यह अशोभनीय है कि वे डंडे तथा स्वार्थ की ही भाषा समझते हैं' – ४ जून, १९५६ को पं० दीनदयाल उपाध्याय ने पांचजन्य में इन वाक्यों को देश की दिग्भ्रमित अर्थनीति के संदर्भ में लिखा था। उन दिनों भी बजट में १२०० करोड़ रुपए का घाटा था। उन दिनों भी उच्च पदों पर स्थित कर्मचारियों तथा बड़े उद्योगपतियों की जेबों की ओर धन भाग रहा था। विशाल जनसमूह से विशाल उत्पादन की इच्छा उन दिनों भी धूमिल थी। पं० जवाहरलाल नेहरू के समाजवाद के युग में 'सर्वसाधारण व्यक्ति को असाधारण विकास योजना का बोझ सहना' पड़ रहा था। यह भ्रामक अवधारणा अभी भी बनी हुई है।

बजट का घाटा देश के सर्वसाधारण व्यक्ति के कंधे पर होता है और कथनी में सारा काम उसी सर्वसाधारण व्यक्ति की उन्नति के लिए ही होता है। बजटीय घाटे की बिजली उन ८५ प्रतिशत देश की जनता के सिर गिरती है जिनके पास किस प्रकार जीवन का साधन जुट पाता है। बड़ी संपत्तियों के स्वामी इससे क्या प्रभावित होंगे। लगभग ५८ हजार करोड़ रुपए सरकारी बैंक से बतौर कर्ज लेकर हजम कर जाने वाले उद्योगपतियों से सरकार निपटने में सक्षम नहीं, काले धन

Scanned with OKEN Scanner

पर फन फैलाकर बैठे साँपों से उलझना भी कठिन है।

'**भारत में ऐसे लोग बड़ी संख्या में हैं जिनके हित पाश्चात्य अर्थव्यवस्था एवं उत्पादन प्रणाली से जुड़े हुए हैं। पिछले सौ वर्षों में जिस अर्थव्यवस्था का भारत में विकास हुआ है उसने भारत और पश्चिम के औद्योगिक देशों की व्यवस्था को एक-दूसरे का पूरक बनाया है। इसमें भारत के हितों का संरक्षण नहीं हुआ बल्कि उनका बराबर शोषण ही होता रहा। इस शोषण की क्रिया में पाश्चात्य आर्थिक हितों ने भारत के कुछ वर्गों को भी अपने अभिकर्त्ता के रूप में साझीदार बनाया है। प्रारंभ में व्यापारी और कमीशन एजेंट के रूप में इनके हित संबंध विदेशी आर्थिक हितों के साथ बँध गए। इस वर्ग का देश के आर्थिक जीवन पर प्रभुत्व रहा है। आज भी संख्या तथा देश की राष्ट्रीय आय में उनका योगदान कम होते हुए भी वे समाज और देश के जीवन पर भारी प्रभाव रखते है। वे अधिकाधिक अपने विदेशी प्रतिद्वंद्वियों का स्थान ग्रहण करना चाहते हैं।**' –पं० दीनदयाल उपाध्याय के अनुभव में आए इन देशी आर्थिक समूहों का दबाव अभी भी देश की अर्थनीति पर विशेष रूप से पड़ता है। ये शक्तियाँ आज पहले से अधिक संगठित और सक्रिय हो गई हैं।

१९९१ के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी संस्थाओं का हस्तक्षेप और बढ़ता चला गया है। विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रभाव से देश के आर्थिक सुधारों की दिशा निर्धारित होने लगी है। २००१-०२ के बजट के निर्माण में भी सीआईआई, फिक्की और एसोचैम के अतिरिक्त विश्व बैंक और मुद्राकोष के दबावों की चर्चा फैली हुई है। मुद्राकोष ने नवंबर २००० में अपनी स्टाफ कंट्री रिपोर्ट के माध्यम से और विश्व बैंक ने इंडिया स्टेट्स रिफार्म के जरिए आने वाले बजट की रूपरेखा खींच रखी है। भूमंडलीकरण के अंतर्विरोधों से देश की अर्थनीति का निर्धारण अधिक संदेहास्पद हो गया है।

२००१ के बजट में आर्थिक समीक्षा की महत्वपूर्ण बिंदुएं

१. आयकर एवं निगमित करो में कोई बढ़ोत्तरी नहीं होगी, बल्कि उन पर दिए गए छूटों को खत्म करना या कम करना।
२. सेवा क्षेत्र के एक पूरे वर्ग को करों के अंतर्गत लाना।
३. कस्टम ड्यूटी में कमी जिससे लोगों को सस्ते विदेशी वस्तुएं मिले।
४. सेनवैट योजना में रिक्तता को भरने हेतु उत्पाद-शुल्क के ढाँचे को तर्कसम्मत बनाया जाएगा।
५. प्रॉविडेन्ट फंड, पेंशन एवं छोटे बचतों में कमी की जाएगी।
६. औद्योगिक विकास के लिए ब्याज दरों में कमी।
७. यूरिया के दामों में बढ़ोत्तरी।
८. सुरक्षा पर किए जा रहे खर्चों को वर्त्तमान स्तर पर ही बनाए रखा जाएगा।
९. सरकार को छोटा किया जाएगा और रेलवे जैसे उपक्रमों को निगमीकृत किया जाएगा।
१०. सार्वजनिक उपक्रमों के निजीकरण के तीव्रता लाई जाएगी।
११. इंटरनेट टेलीफोनी की शुरुआत होगी।
१२. छोटे उद्योगों को दिए जा रहे संरक्षण को खत्म किया जाएगा।
१३. कृषि क्षेत्र को निजी हाथों में सौंपना इत्यादि।

अर्थशास्त्र के नोबल पुरस्कार से सम्मानित अमर्त्यसेन का भी मानना है कि भूमंडलीकरण का कोई निराकरण नहीं है यद्यपि इससे बहुत लोग लाभ उठा सकेंगे, फिर भी बहुत लोगों को हानियाँ भी होगी। ऐसे लोगों के कल्याण के लिए कार्यक्रम चलाना आवश्यक है। प्रश्न उठता है कि वे कौन लोग होंगे जिन्हें भूमंडलीकरण से लाभ होगा और शेष वे कौन लोग होंगे, जिन्हें घाटा होगा और उन्हें बचाने के लिए कल्याण योजना चलानी पड़ सकती है? ऐसी स्थिति क्यों है कि भूमंडलीकरण न ग्रहण करने योग्य है और नकार देने लायक। विभ्रम की दशा का कारण क्या है? वास्तव में यही दशा शुरू से हमारे देश की अर्थनीति की रही है। इसका अर्थ हुआ कि आर्थिक नीति की वास्तविक दिशा सुनिश्चित नहीं हुई। वास्तविक दिशा सुनिश्चित हुई होती तो समग्र विकास होता। ऐसा नहीं होता कि सरकार द्वारा दिखाया जाने वाला विदेशी पूँजी निवेश, सकल घरेलू उत्पाद विकास दर आदि के आँकड़ों में उन्नति दिखाई देती है और इस उन्नति से वंचित बहुत से लोगों के विपन्न चेहरे भी सामने होते। गरीबी और अमीरी की बढ़ती खाई के लिए इस अर्थनीति को दोषी ठह[राया] जा सकता है। इस खाई को पाटने का [...] अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन यदि कल[्याण] कार्यक्रमों से करने की राय देते हैं तो उ[...] नहीं है। देश में राजनीतिक व्यवस्था [...] निर्मित अर्थनीति का कोई मतलब नहीं, [...] अपने देशवासियों को दया का पात्र ब[...] से रोका नहीं जा सके। उनके स्वाभिमान [...] कर्म-कौशल को प्रश्रय नहीं मिले। कल्या[ण] कार्यक्रमों से गरीबी-अमीरी की खाई पा[टने] का विचार उचित नहीं कहा जा सक[ता।] प्रत्येक नागरिक के लिए यह संवैधानि[क] प्रावधान है कि वह जीविका के पर्या[प्त] साधन प्राप्त करे। उसे कृपापात्र बनाने वा[ली] किसी भी भूमंडलीकरण से प्रेरित आर्थि[क] नीति के औचित्य पर प्रश्नचिन्ह लगे बि[ना] नहीं रह सकता।

बजट सरकार की आर्थिक नीतियों [...] दिशा को अभिव्यक्त करता है और [...] विकास की रूपरेखा की पूर्व सूचना भी [...] आर्थिक सुधारों के वर्तमान दौर सरकार [...] आर्थिक नीतियों से ऐसे महत्वपूर्ण फैस[ले] सामने आएंगे जिनका करोड़ों लोगों के जीव[न] से संबंध है। यह बजट एक ऐसी कार्[...]

सीमा निर्धारित कर देता है जिसके बाद दुबारा किसी आधारभूत ढाँचा या खाद्य सब्सिडी या अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए को स्थान नहीं बचता। यहाँ तक कि इससे आपदा और राष्ट्रीय संकट में भी आर्थिक व्यय का निर्धारण हो जाता है। बजट को गंभीरता से लेना आवश्यक होता है। अक्सर सांसदों में राजनीतिक संप्रभुता का आकर्षण अधिक होता है वित्त संबंधी गहरी जानकारी और चतुराई पूर्वक निर्मित होने वाले बजट के पेंच से उनका नाता कम होता है। जिसके कारण आर्थिक दावपेंच बनाने वाले लोगों का स्वार्थ आसान ढंग से हो जाता है।

वित्तमंत्री श्री यशवंत सिन्हा ने २८ फरवरी, २००० को कहा था कि 'दुनिया की नजर हम पर टिकी हुई है और हम दिखाएंगे।' दुनिया की नजरों के ख्याल में फँसी हुई वित्तमंत्री की जागरूकता कहीं देश की धरती से उपर तो नहीं गुजर रही? इस पर नजर रखने से ही स्वदेशी का आर्थिक दृष्टिकोण सामने आएगा।

आर्थिक पतन का आँकड़ा

	वर्ष १९९९-२०००	वर्ष २०००-२००१
सकल घरेलू उत्पाद	६.४%	६.०%
कृषि उत्पादन	-०.७%	-३.५%
औद्योगिक उत्पादन	६.५%	५.७%
सेवा क्षेत्र	९.६%	८.३%
विदेशी मुद्रा भंडार	१०.३%	१४.४%
शेयर बाजार	–	-२३.२% (जन.२००० एवं जन.२००१)
उपभोक्ता वस्तुएँ	५%	८.५%
टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुएँ	१४%	१७.५%
गैर-टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुएँ	२.२%	५.७%
मूल वस्तुएँ	५.२%	४.८%
मध्यवर्ती वस्तुएँ	९.१%	४.७%
पूँजीगत वस्तुएँ	७.५%	३.२%
निर्माण क्षेत्र	७%	५.९%
विद्युत क्षेत्र	७.७%	४.८%
खनन	०.४%	४.१%
विदेशी संस्थागत निवेश	–	-७०% (अप्रैल-दिसम्बर)
प्राथमिक बाजार से संसाधन संग्रहण	–	-२.६%
प्रतिव्यक्ति आय	४.८%	४.८%
विद्युत उत्पादन	८.८%	६.७%
वित्तीय घाटा (सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में)	५.५%	५%

लगता है कि सुधार योजनाओं की दिशा उचित नहीं।

नई आर्थिक योजनाओं में जिन क्षेत्रों के प्रति सरकार हाथ खींच रही है उन पर भविष्य में निजीकरण की छाया पड़ने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। और जिन क्षेत्रों में सरकार सहयोग का उत्साह दिखा रही है उसका कोई न कोई कारण है। वह सीधा जनहित का विषय नहीं लग रहा क्यों जनहित को केंद्र बनाने की प्राथमिकता को व्यापक दायरे में लिया जा रहा है अर्थात् यदि देश में आर्थिक समृद्धि की बाढ़ आएगी तो जनता का हित होगा ही। पर यह दृष्टि कोण भ्रामक इसलिए हो सकता है कि आर्थिक समृद्धि का केंद्र सर्वसाधारण जनता नहीं होगी। कुछ लोग होंगे। जैसा पूँजीवादी व्यवस्था में होता है।

ध्यान रहे कि पं० जवाहर लाल का 'समाजवाद' एक विशेष प्रकार का समाजवाद था जिसमें जनता के हित की बात होती थी और औद्योगिक घरानों को पोषण मिलता था। ऐसे समाजवाद का अंत पूँजीवाद से करने का मतलब भी एक ही हुआ – अमीरी-गरीबी के बीच की खाई को और गहरा करते जाना।

बजट की स्वदेशी दृष्टि से समीक्षा करने के लिए मुख्यत: राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बुनियादी क्षेत्रों जैसे कृषि छोटे व मझौले उद्योग, कुटीर व ग्रामोद्योग, ग्रामीण बैंक, रोजगार, खाद्य सुरक्षा, जल प्रबंधन आदि आधारभूत ढाँचा और आम जनता को प्रभावित करने वाले सेवा क्षेत्र को कसौटी मानना होगा। लेकिन आर्थिक समीक्षा के लिए जिन बिंदुओं को बजट के संदर्भ में महत्वपूर्ण माना जा रहा है उन्हें देखने पर स्पष्ट हो रहा है कि वह स्वदेशी की आर्थिक समीक्षा-दृष्टि के अनुरूप नहीं है।

इस बजट से यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था क्षतिग्रस्त होगी। छोटे उद्योगों (लघु, कुटीर) और कृषि उत्पादों का ह्रास होगा। रोजगार में भारी कमी आएगी। आम जनजीवन की परेशानी बढ़ेंगी। इसकी आशा की जा सकती है कि आने वाले बजट के दुष्प्रभावों से स्वदेशी स्वावलंबन और स्वाभिमान को हानि होगी।

भ्रामक अर्थनीति होने के कारण ही घाटे का सामना करना पड़ रहा है। प्रकाश में आए आँकड़े में सकल घरेलू उत्पाद, कृषि उत्पादन, सेवा क्षेत्र घरेलू बचत और विदेशी मुद्रा भंडार आदि सभी क्षेत्रों की वृद्धि दर में गिरावट दिखाई गई है। अनेक सुधार योजनाएँ चलाई जा रही है फिर भी चालू वित्तवर्ष में प्रत्येक क्षेत्र में गिरावट क्यों आई? २०००-०१ का बजट रखते हुए वित्तमंत्री ने भारी बढ़ोत्तरी के दावे किए थे। राजकोषीय घाटा और मुद्रास्फीति में हुई बढ़ोत्तरी से ऐसा

सरकार पेट्रोलियम उत्पादों में सब्सिडी की कटौती कर रही है। मिट्टी के तेल पर चार से पाँच हजार करोड़ रुपए की सब्सिडी दी जाती है। जिससे मिट्टी तेल के वास्तविक मूल्य में प्रति लीटर तीन रुपए की कमी हो जाती है। इसी प्रकार रसोई गैस पर भी ३० से ४० प्रतिशत की सब्सिडी दी जाती है। सरकार के सब्सिडी कम करने का प्रमुख कारण यह भी माना जा रहा है कि २००२ में तेल क्षेत्र की कीमतें बाजार की शक्तियाँ निर्धारित करेंगे। प्रशासनिक मूल्य निर्धारण प्रक्रिया समाप्त हो जाएगी। स्पष्ट है कि जब बाजार की शक्तियाँ मूल्य निर्धारण का काम अपने हाथ में ले लेगी, मिट्टी का तेल सर्वसाधारण के लिए खरीदना कठिन हो

Scanned with OKEN Scanner

जाए अभी डीजल और मिट्टी तेल की कीमत में ९.२५ रुपए का अंतर है। यह अंतर समाप्त हो जाएगा क्योंकि मिट्टी तेल का उत्पादन मूल्य डीजल के उत्पादन मूल्य से अधिक होता है। संभावना व्यक्त की जा सकती है कि मिट्टी तेल का उपभोग सर्वसाधारण के लिए नहीं होगा।

वित्तमंत्री ने साफ-साफ कह दिया कि यदि पेट्रोलियम उत्पादों पर दी जाने वाली सब्सिडी में कटौती नहीं की जाएगी तो २००१-०२ के बजट में यह कटौती ४० प्रतिशत करनी पड़ सकती है।

रेल मंत्रालय के प्रति भी बजट अनुदार है रेलमंत्री १५००० करोड़ रुपए माँग रही है लेकिन उन्हें १३००० करोड़ रुपए से अधिक वित्तीय सहायता नहीं मिलने वाली है। रेल मंत्रालय के प्रति इस उपेक्षा के पीछे भी निजीकरण का पेंच काम कर रहा है। रेल के उत्पादन इकाईयों पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों की नजर है। रेल का विशाल उपक्रम भी सरकार के दायरे से एक-एक कर कटते जाएँगे। इस उपक्रम को भी घाटे का सौदा करार देकर निर्जीकरण के हवाले किया जाएगा। जिससे सर्वसाधारण का रेल पर चढ़ना घटेगा। रोजगार की भी कमी होगी। प्रधानमंत्री की घोषणा है कि २००४ तक देश के सभी भागों को सड़क से जोड़ दिया जाएगा। नए वित्तवर्ष में सड़क-परिवहन और राजमार्ग को ४००० करोड़ रुपए से भी अधिक राशि दी जाने वाली है। लेकिन नागरिक उड्डयन मंत्रालय के प्रति सरकार की उदासीनता दिखाई दे रही है। इस मंत्रालय की वजटीय राशि में ६०० करोड़ रुपए की कमी की जा रही है।

सर्वविदित है कि उड्डयन मंत्रालय के अंतर्गत आने वाले एयर इंडिया के निजीकरण की योजना चल रही है। इसलिए उड्डयन मंत्रालय को वित्तीय सहयोग कम किया जा रहा है।

आज देश का राजस्व घाटा ७३५३२ करोड़ रुपए और वजटीय घाटा लगभग १,०८८९८ करोड़ तक पहुँच गया है। वर्तमान आर्थिक व्यवस्था में भारत विश्व का नौवां सबसे बड़ा कर्जखोर देश बन गया है १,०१,००० करोड़ है तथा पुराना कर्ज १,२४,००० करोड़ है। २०००-२००१ वित्तीय वर्ष में देश का कुल कर्ज ९७.८६ बिलियन डालर है यह संकल घरेलू उत्पाद के २०.७ प्रतिशत के बराबर है।

इसके बावजूद देश में कर की चोरी भी बहुत हो रही है। जिसमें नियंत्रण का उचित प्रयास आवश्यक है। १९९९-२००० में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने २ अरब १५ करोड़ रुपये, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क में १ अरब १ करोड़ ३७ लाख रुपये और सीमा शुल्क में १४ करोड़ १२ लाख रुपए से अधिक की कर चोरी की है। इनके अलावा टाटा जैसी कम्पनी भी कर का लगभग ८ सौ करोड़ का भुगतन नहीं करके मामले को मुकदमें में फँसा दिया हैं मुकदमे के फैसले में कुछ वर्ष तो लगेंगे ही। इस बीच वह उस पैसे अपना कारोबार बढ़ाएगा। सिगरेट बनानेवाली कम्पनियाँ भी अपकारी करों की चोरी के लिए दाव-पेंच लगाती रही हैं। इस प्रकार की चोरियों के अनेक रूप देश में प्रचलित हैं। निर्यात शुल्क में भी चमत्कारी चोरियों के तौर-तरीके सुनने में आते हैं। इन चोरियों को रोक दिया जाए तो देश घाटे में नहीं रह सकता उसकी प्रगति प्रत्येक वर्ष सामने आ सकती हैं। लेकिन देखा यह जा रहा है कि देश की व्यवस्था में राष्ट्र-भावना के अभाव के कारण विषमताएँ उत्पन्न होती हैं। व्यक्ति का निजी स्वार्थ देश को गर्त में धकेल रहा है। यह अनायास नहीं हो गया है कि १९९१ में किसी विदेशी कम्पनी की साझेदारी तकनीकी तक ही सीमित होती थी, भारतीय कम्पनियों के अधिकतम शेयर देश की वित्तीय संस्था या व्यक्ति के पास होना अनिवार्य था, निजी कम्पनियाँ सिर्फ निर्धारित क्षेत्रों में ही काम करती थीं, लेकिन अब २००१ आते-आते देश में लगभग ९२,००० करोड़ रुपये का विदेशी पूँजी निवेश हो चुका है, अधिकतर संयुक्त उपक्रम विदेशी हिस्सेदारों के शेयर अधिक होने के कारण उनके हाथ में चली गई हैं, बाजार पर उनका कब्जा बढ़ता जा रहा है। वित्तीय घाटे को दूर करने के लिए उत्पादन केन्द्रों को बेचते जाने का यह तौर तरीका कहाँ तक उचित है। कर्ज लेने और सम्पत्ति बेंचना [illegible] एक घर-गृहस्थी के लिए भी उचित न[illegible] माना जाता। व्यक्तिगत और कम्पनी आय[illegible] पर २ प्रतिशत का अधिभार लगाकर १३[illegible] करोड़ रुपये प्राप्त कर लेने अथवा एक-ए[illegible] उपक्रम का निजीकरण करते जाने[illegible] आर्थिक संकट का निराकरण संभव है क[illegible]

यह रास्ता कई दोष उत्पन्न करनेव[illegible] है। इसमें से सिर्फ बेरोजगारी की समस्या ही देखें जिससे सामाजिक विकृति अपराध, आतंक, असुरक्षा आदि बढ़ स[illegible] है तो इसका हल दिखाई नहीं देता। आ[illegible] उदारीकरण के इस दौर में केवल पैसे अर्जन हो स उद्देश्य से आर्थिक सुधार के कार्यक्रमों का नतीजा रोजगार की द[illegible] कमी के रूप में सामने आ रहा सार्वजनिक क्षेत्र में १९९९ में रोजगार ब[illegible] घटकर शून्य हो चुकी है, और निजी में भी लगातार कमी होती जा रही [illegible]

सर्वाधिक रोजगार देने वाले क्षे[illegible] प्रति सरकार का रूख ठीक नहीं है। कृषि का क्षेत्र है। इस क्षेत्र में भी स[illegible] की कटौती, निजीकरण की प्रक्रिया कार्पोरेट क्षेत्र की तरह उन्नति के रास्ते उन्मुख दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है। बैंक और अन्तरराष्ट्रीय मुद्राकोष का ल[illegible] दबाव पड़ता रहा है कि भारत कृषि क्षे[illegible] दी जानेवाली सब्सिडी रोके। भारत स[illegible] सब्सिडी घटाने जा रही है लेकिन ज[illegible] अमेरिका, जर्मनी, दक्षिण कोरिया सभी अपने देश की कृषि को सब्सिड[illegible] हैं। जापान, ६८ प्रतिशत, जर्मनी ६४ प्र[illegible] अमेरिका ६० प्रतिशत कृषि क्षेत्र सब्सिडी देते हैं यूरोपीय संघ के १७ सहित जापान कोरिया आदि ने विश्व [illegible] संगठन द्वारा दिये गये कृषि क्षेत्र की स[illegible] की कटौती के दबाव का जमकर [illegible] किया। अमेरिका तो अपने मार्ग में क[illegible] संस्थाओं को आड़े आने ही नहीं दे स[illegible] भारत इनकी चपेट में क्या आ जात[illegible] भारत में तो सिर्फ ४० प्रतिशत की स[illegible] दी जाती रही है। कारण की खोज [illegible] नहीं है। आर्थिक समीक्षा में बताया ग[illegible] देश में अनाज उत्पादन की कमी

कारण खराब मौसम है एक बार भी यह नहीं कहा गया है कि अनावश्यक आयात भी है। कपास की खेती में घाटे का कारण विदेशी बीजों का अनावश्यक हस्तक्षेप किसानों की आत्महत्या का कारण बनकर सामने आया। तेलहन की खेती में कमी कारण खाद्य तेलों का आयात है। भारतीय बाजार में घानी के तेल को किस तरह प्रतिबंधित किया गया और नारियल का उत्पादन क्यों घाटे का सौदा हो गया है, किसान इस खेती को आज क्यों छोड़ने को मजबूर हो रहा है? आर्थिक समीक्षा में इसकी चर्चा भी आनी चाहिए थी। केवल यह कह देने से कि मौसम खराब होने से कृषि उत्पादन कम हो गया, धोखा देने के समान हैं और चालाकी भरे शब्दों से छलपूर्वक अपना वक्तव्य बनाने के पीछे काम कर रही मानसिकता में राष्ट्र भाव का अभाव तो है ही, इस मानसिकता के प्रेरक तत्त्वों में देशी-विदेशी पूँजी का प्रभाव भी है। सरकार को खाद्य निगम का एकाधिकार समाप्त करना है खाद्यान्न की खरीद और भण्डारण में निजी क्षेत्र को बढ़ावा मिलने वाला है। देशी उद्योगपतियों ने खाद्यान्न की खरीद और भण्डारण का जिम्मा अपने हाथों में लेने का प्रयास क्यों कररहे हैं? इसलिए कि विदेशी कृषि उत्पाद के बहुराष्ट्रीय व्यवसायी भारत की कृषि को अपना निशाना बनाने पर तुल गये हैं। विदेशी बाजार में बासमती चावल का व्यापार ही देखें तो यह ज्ञान हो जाएगा कि निर्यातक खेतीहरों के यहाँ पहुँचकर अपेक्षित चावल रोप की हर सुविधा मुहैया करा रहे हैं। खेतीहरों से चावल लेकर विदेश में बचें रहे हैं। इस प्रकार के और भी लाभकारी उद्देश्य निजी कम्पनियों की सोच में समाया हुआ है ये पूँजीपति सरकार को अपने हितों के लिए योजनाएँ बनवाने में लगे हैं। कुल मिलाकर यह पूँजी उन्मुखता कुछ ही लोगों के हितरक्षा में व्यक्त होती है। इस अर्थव्यवस्था को समाजवाद के विफल हो जाने के बाद का एकमात्र विकल्प मानना अनुचित होगा। वास्तविक विकल्प तो किसी भी आर्थिक केन्द्रीकरण की प्रक्रिया घटित करनेवाली व्यवस्था में नहीं है। ■

ग्रामीण विकास मंत्रालय को बजट में कम आवंटन

केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय योजना आयोग से असंतुष्ट है क्योंकि योजना आयोग ने बजट में उसका हिस्सा कम कर दिया है। मंत्रालय को केवल इस बात से सान्त्वना मिल रही है और भी कई मंत्रालयों का हिस्सा कम किया गया है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय केन्द्र के कई गरीबी उन्मूलन योजनाओं के लिये उत्तरदायी है। जैसे- सुनिश्चित रोजगार योजना (ई.ए.एस.), स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना (एस.जी.एस.वाई.), जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (जे.जी.एस.वाई.) और इन्दिरा आवास योजना (आई.ए.वाई.) इत्यादि। इन सभी केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं का बजट कई करोड़ रुपयों में होता है। लेकिन वर्तमान २००१-०२ के बजट में इनके लिये दिया गया अंश देश की गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों के लिये अपर्याप्त है।

योजना आयोग द्वारा निश्चित किये गये धन को अपर्याप्त माना जा रहा है। योजना आयोग ने ऐसा क्यों किया? सबके बाद भी योजना आयोग केवल योजना बनाने वालों की एक संस्था है, वरीयता तय करना वित्त मंत्रालय का कार्य है। योजना आयोग ने ग्रामीण विकास मंत्रालय को दिये जाने वाले पैसे में कटौती पहली बार ही नहीं की है यह पहले भी होता रहा है। रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण विकास मंत्रालय ने इस बार अपने लिये १५,००० करोड़ रुपयों की माँग की थी इसके स्थान पर उसे लगभीग ७,५०० करोड़ रुपयों का आवंटन हुआ है जो पिछले वर्ष २०००-२००१ के बजट में किये गये ९,७६० करोड़ रुपये से भी कम है।

पदाधिकारियों के अनुसार मंत्रालय को दिये जाने वाले आवंटन में प्रतिवर्ष कमी की जा रही है जैसी १९९९ के भारत के ग्रामीण विकास रिपोर्ट में भी दर्ज है.........ग्रामीण विकास, जो देश की आधी आबादी को प्रभावित करता है, के लिये बजट में आवंटन कुल खर्चों का केवल १/१० ही होता है।

लेकिन इसका एक और महत्वपूर्ण पक्ष है - गरीबी उन्मूलन योजनाओं के लिये विभिन्न राज्यों को किये गये आवंटन खर्च भी नहीं पाते हैं। हर वर्ष एक बहुत बड़ा हिस्सा बिना उपयोग हुए बच जाता है और उसका कुछ प्रतिशत ही अगले वर्ष खर्च करने के लिये स्थानातंरण किया जाता है। राज्यों के इस आवंटन का कम हिस्सा खर्च करने का मुख्य कारण उनकी अपनी खराब आर्थिक स्थिति है जिससे वे इसमें अपना हिस्सा नहीं मिला पाते और वे आवंटन का उपयोग नियोजित व्यक्तियों के वेतन पर भी खर्च कर देते हैं।

पिछले वर्ष ग्रामीण सड़कों के लिये पी.एम.जी.वाई. के अन्तर्गत बजट में आवंटित २५०० करोड़ रुपये में से केवल ३७०.११ करोड़ रुपये ही राज्यों ने लिये उसमें भी ११ माह लग गये।

इस वर्ष ऐसी सूचना है कि बजट में प्रधानमंत्री ग्रामोदय रोजगार योजना के अन्तर्गत ग्रामीण विद्युतीकरण का प्रावधान होगा। और हम उम्मीद कर सकते हैं कि इसका हश्र ग्रामीण सड़कों के लिये घोषित किये गये प्रधानमंत्री ग्रम सड़क योजना की तरह नहीं होगा। पूरे देश में ८०,००० गाँवों में बिजली नहीं है।

विभिन्न योजनायें	आवंटन	कुल जारी रकम
ई.ए.एस.	१,३०० करोड़ रुपये	७६४ करोड़ मध्य जनवरी तक
एस.जी.एस.वाई.	१,००० करोड़ रुपये	१६० करोड़ मध्य जनवरी तक
जे.जी.एस.वाई.	१,६५० करोड़ रुपये	१,११५ करोड मध्य जनवरी तक
आई.ए.वाई.	१,७१० करोड़ रुपये	१,२०० करोड़ रुपये

Scanned with OKEN Scanner

बजट पूर्व परिचर्चा

बजट समीक्षा पर स्वदेशी पत्रिका द्वारा आयोजित की गई परिचर्चा में प्रमुख रूप से तीन विशेषज्ञों की बजट पूर्व समीक्षा पर विचार दिया जा रहा है। परिचर्चा में भाग लेने वाले सर्वश्री प्रो. रुद्रदत्त, अध्यक्ष - लघु उद्योग जन-आयोग, श्री केशवभाई ठक्कर - राष्ट्रीय उपाध्यक्ष भारतीय मजदूर संघ, श्री जगदीश शेट्टीगर - आर्थिक सलाहकार भाजपा के बीच हुई चर्चा की प्रधान बिन्दुएं निम्नलिखित हैं -

प्रो. रुद्रदत्त

- सरकारी खर्च को कम करने के ठोस उपाय नहीं हुए।
- संगठित क्षेत्र में रोजगार वृद्धि दर ०% रहा है।
- हम सुरक्षित रोजगार से असुरक्षित रोजगार की तरफ जा रहे हैं।
- केवल सरकारी खर्च घटाकर सामाजिक संतोष के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं की जा सकती।
- त्रुटिपूर्ण कर नीतियों के चलते कर भुगतान में समर्थ एक बड़ा वर्ग 'कर' से बचा हुआ।
- मध्यम वर्ग कर के दायरे में लाने के प्रयास करने चाहिए।
- ६० प्रतिशत अतिरिक्त रोजगार के अवसर प्रदान कराने वाले क्षेत्र 'कृषि' और लघु उद्योग है। इन्हें पर्याप्त संरक्षण की आवश्यकता है।
- कृषि वृद्धि दर संतोषजनक नहीं है।
- रोजगार परन्तु गरीबी उन्मूलक बजट की दिशा में कार्य हो। ■

श्री केशव भाई ठक्कर

- बजट उच्च वर्ग के लिए बनेगा, ऐसे संकेत हैं।
- कृषि जिनके जीवन का आधार है उन्हें कर के दायरे से बाहर रखा जाय। परन्तु जिनकी आय अतिरिक्त साधनों से है और कृषि को वे केवल 'कर अपवंचना' के साधन के रूप में प्रयुक्त करते हैं। उन्हें कर दायरे में लाया जाये।
- एफिशिएन्सी ऑडिटिंग डिपार्टमेंट बनाया जाए ताकि बीमार उद्योगों की पूर्व में ही पहचान की जा सके।
- प्रत्येक क्षेत्र में पारदर्शिता आवश्यक है, चाहे उद्योग बड़ा हो या छोटा। ■

जगदीश शेट्टीगार

- बाहर से या ऊपर से प्राप्त संकेतों के आधार पर बजट निर्माण की बात गलत है। मैं नहीं समझता कि किसी के दबाव से बजट बन रहा है। नीतियाँ बन रही हैं। जब अटल जी अमेरिका गये थे तो काफी प्रयास किया गया कि सी.टी.बी.टी. पर हस्ताक्षर कर दिया जाय। लेकिन उन्होंने माना नहीं। तो कहीं से कोई दबाव डालने का कोई सवाल ही नहीं है। उसका विचार तो है कि आर्थिक सुधार करेंगे। अभी अमुको (अर्न्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष) का दल भारत आया उस सयम यह सोचा गया होगा कि ये हमारे आर्थिक सुधार पर दबाव डालने के लिए आये हैं। विरोधी दल का टिप्पणी करना काम है। कभी सब्सिडी के विषय में टिप्पणी ..., विदेशी वस्तुओं के विषय में टिप्पणी, कृषि के विषय में टिप्पणी ...। क्या समाजवाद की व्यवस्था चल रही है? इसका नतीजा क्या हुआ?
- चालीस साल पहले समाजवाद को लाया उन्हीं लोगों ने इसे ठुकराया। इस व्यवस्था में हम समाजवाद नहीं चला सकते। तो दूसरा रास्ता ढूँढना जरूरी है। मुनाफा कमना ही होगा यही हमारा फैसला है। जैसे रक्षा मंत्रालय है, परमाणु क्षेत्र है घाटे में चल रहा है।
- अभी वित्तीय घाटे का सबसे बड़ा हिस्सा पुराने कर्ज के ब्याज की दे है। जब तक हम ब्याज देनदारी मात्रा में कमी नहीं करते। वित्तीय को हम कम नहीं कर सकते। वापस करना है तो कैसे करे?
- इस साल की अनुमाणित आय २,०१,००० करोड़ थी तथा ब्या भुगतान १,०१,००० करोड़ है पुराना कर्जा १,२४,००० करो है। कुल मिला कर आय प्रा २२,००० करोड़ से ज्यादा है। कर्जे को वापस करना अतिआ है। जब तक पुराना कर्ज वाप होगा व्यापार भुगतान संतुलन पत्र में नहीं होगा। ब्याज के हमारा वित्तिय घाटा पिछले पाँच में दुगुना घाटा लगभग ५५ करोड़ था आज वह १,११,००० से ऊपर होगा। तो प्रश्न यह उ कि ब्याज भुगतान पर नियंत्र किया जाय। तो मेरी समझ प्रश्न का एक बड़ा सरल उपाय ऋण का भुगतान हमें कम एक बार करना ही चाहिए।
- विनिवेश से प्राप्त पैसे कम एक तिहाई हिस्से से ऋण का होना चाहिए। इससे कर्ज क घटेगा तथा ब्याज की मात्रा होगी।
- अब सब्सिडी की बात लें। दुरुपयोग हो रहा है। सब्सिडी ग लिए आवश्यक वस्तुओं पर देना जैसे गरीबों के लिए अनाज, आदि पर सब्सिडी की बाज है। में इनका दुरुपयोग हो रहा है

Scanned with OKEN Scanner

भारत सरकार ने उदारवाद की ओर जबसे कदम बढ़ाया है इस पर आरोपों और प्रश्नों का बौछार कुछ ज्यादा ही उग्र हुआ है। इन्हीं उग्र आरोपों में से एक है बजट पूर्व सरकार पर पड़ने वाला दबाव।

■ अवधेश कुमार

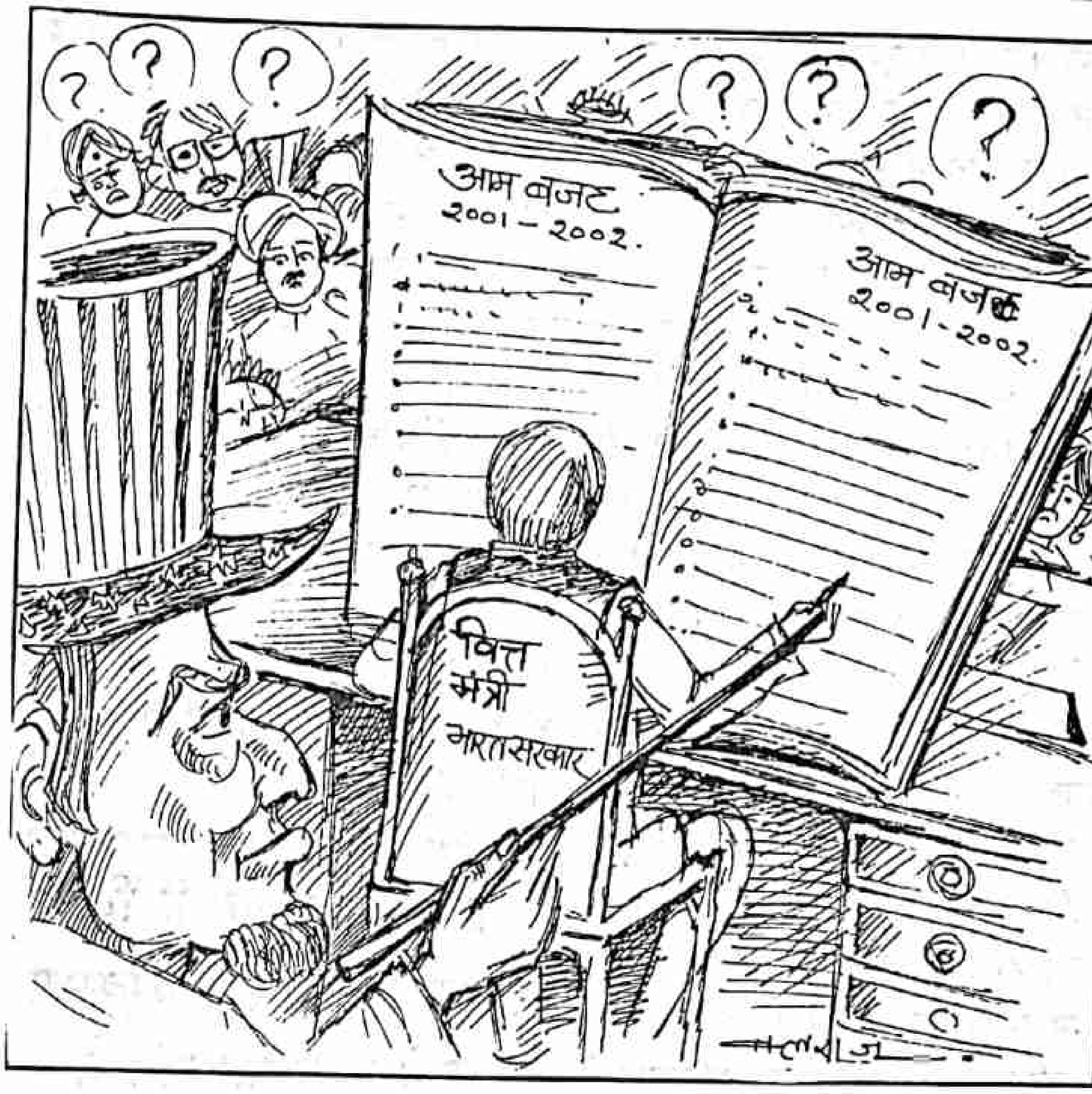

आखिरी क्यों लगता है अमरीकी दबाव का आरोप?

भारत में प्रतिवर्ष बजट को जिस तरह व्यापक स्तर पर तीव्रतम बहस व विमर्श का मुद्दा बनाया जाता है वही अपने-आपमें इस सच्चाई का प्रमाण है कि स्वातंत्र्योत्तर भारत की अर्थव्यवस्था अभी तक सामान्य सामाजिक मनोविज्ञान के अनुकूल ठोस रूपाकार ग्रहण नहीं कर पायी है। वास्तव में यही वह मूल कारण है जहाँ से बजट पूर्व अनेक प्रश्न व आशंकाएं तथा बजट आने के पश्चात असीमित मिश्रित प्रतिक्रियाओं का आविर्भाव होता है। हालांकि अर्थव्यवस्था किसी स्थिरांक पर पहुँचकर संरचनात्मक रूप से ठहर जाए ऐसा संभव नहीं, क्योंकि इसका स्वाभाविक स्वरूप ही गतिमान है एवं समय तथा परिस्थितियों के अनुरूप इसके ताना-बाना में कतिपय परिवर्तन अनिवार्य हो जाता है। किंतु, भारत में खासकर सरकारी नीतियों के स्तर पर चंचलता का परिमाण इतना ज्यादा रहा है कि यह गतिमानता की स्वाभाविक अवस्था को हमेशा ही लाँघे रहा है। यह असहज स्थिति तब भी विद्यमान थी जब भारत ने लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा के आवरण में स्वयं को तथाकथित समाजवादी अर्थव्यवस्था में ढाले रखने का प्रयास किया था तथा यह आज भी विद्यमान है जबकि लगभग एक दशक पूर्व से भारत समाजवादी ढाँचे से निकलकर उदारवादी अर्थव्यवस्था के ताना-बाना में समा जाने की कोशिश कर रहा है। वैसे भारत सरकार ने उदारवाद की ओर जबसे कदम बढ़ाया है इस पर आरोपों और प्रश्नों का बौछार कुछ ज्यादा ही उग्र हुआ है। इन्हीं उग्र आरोपों में से एक है बजट पूर्व सरकार पर पड़ने वाला दबाव। सरकार पर यह आरोप लगाया जाता है कि बजट बनाते समय सरकार को अपरिमित दबावों के अंदर काम करना पड़ता है। बल्कि एक पक्ष का तो सीधा मानना है कि भारत सरकार का बजट मूलतः अमरीका, उसके समर्थक देशों उसके द्वारा संचालित वित्तीय संस्थानों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दबाव में आकर ही निर्मित होता है।

इन आरोपों के परिप्रेक्ष्य में यह प्रश्न उठना लाजिमी है कि क्या वास्तव में सरकार को बजट पूर्व ऐसे अपरिमित दबावों के अंदर काम करना पड़ता है एवं क्या बजट में घोषित उसकी अनेक नीतियाँ इन दबावों से प्रभावित होती हैं? सच कहा जाए तो मेरी दृष्टि में यह ऐसा प्रश्न है जिसका कोई निश्चित प्रामाणिक उत्तर देना संभव नहीं। यह एक अत्यंत ही जटिल प्रश्न है जिसका उत्तर अपने-अपने नजरिए पर निर्भर है। भारत में उदारवादी अर्थव्यवस्था के मूल प्रणेता डॉ. मनमोहन सिंह जब अपना तीसरा बजट पेश करने वाले थे – इस लेखक ने यही प्रश्न एक साक्षात्कार के दौरान पूर्व वित्तमंत्री मधुदण्डवते से पूछा था। श्री दण्डवते ने यह स्पष्ट स्वीकार किया था कि बजट बनाने की प्रक्रिया में अनेक हित समूह अपने-अपने हितों की दृष्टि से सरकार पर दबाव बनाने की कोशिश अवश्य करते हैं। देखा जाए तो

लोकतंत्र में दबाव एक सामान्य अवस्था है। अगर ये दवाव समग्र रूप में देश की आम जनता के हित में है, देश के उद्योगों के हित में हैं, आर्थिक विकास की गति को बढ़ावा देने वाले हैं – तो इनका स्वागत ही किया जाना चाहिए। किंतु यह सब मूलत: सरकार की दृष्टि पर निर्भर करता है, क्योंकि बजट बनाते समय अंतत: उसे ही तय करना होता है कि समग्रत: क्या देशहित है एवं क्या नहीं। किसी एक नीति के संबंध में भी विचार करने वालों का दो नजरिया हो सकता है। उदाहरण के लिए सीमाशुल्क को २०० प्रतिशत से घटाकर औसत ३५ प्रतिशत तक लाने का मामला है। एक पक्ष इसे अमरीका एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दवाव में उठाया गया कदम मानता है। इस पक्ष का मानना है कि इस कदम से भारतीय बाजार में विदेशी मालों की बहुतायत हो गई एवं मूल्य प्रतिस्पर्धा में न टिक पाने के कारण अनेक भारतीय कंपनियों को अपना बोरिया – बिस्तर बाँधना पड़ा। ठीक इसके समानांतर दूसरे पक्ष की नजर में सीमाशुल्क घटाने से भारतीय बाजार में जीवंत प्रतिस्पर्धा का आगमन हुआ एवं न केवल सामानों की गुणवत्ता, सेवाशर्त्तो एवं मूल्यों के संदर्भ में उपभोक्ता लाभांवित हो रहे हैं वल्कि कर आधार में प्रसार से सरकार की आय भी बढ़ी है। तटस्थता से देखा जाए तो दोनों पक्ष अपनी-अपनी जगह सही है। आखिर विश्व अर्थव्यवस्था से भारतीय अर्थव्यवस्था को समायोजित करने के प्रयास में भारत पर बजटों में आयात कर घटाने का दवाव तो था ही। लेकिन विभिन्न बजटों में आयात शुल्क में कटौतियाँ केवल दबाव के तहत ही किए गए – ऐसा मानना मेरी नजर में उचित नहीं होगा।

इसी तरह का एक उदाहरण ब्याज दर में कटौती का है। वर्तमान बजट के पूर्व सरकार पर इस वात के लिए चौतरफ दवाव है, कि वह ब्याज दर में और कटौती करे। एक पक्ष इसे पूँजी वाजार उसमें भी विशेपकर विदेशी संस्थानक निवेशकों का दवाव मान रहा है। यह तथ्य भी है कि ब्याज दर घटने से बचत का निवेश इक्विटी की दिशा में होता है। ब्याज दर घटने से निवेशक उत्साहित होकर और निवेश करते हैं। इस तरह इसे पूँजी बाजार का दबाव माना जा सकता है। लेकिन इसके दूसरे पहलू भी हैं। मसलन, सरकार पर स्वयं जो ब्याज अदायगी का भार है उसमें कमी आएगी। इसके अलावा सन् २००१ के पहले छ: सप्ताह में ही विदेशी संस्थागत निवेशकों ने ५,१३९ करोड़ यानी १.१ अरब अमरीकी डॉलर का निवेश कर दिया है। यह पिछले वर्ष जनवरी के कुल निवेश से १५ गुना ज्यादा एवं पिछले वर्ष के कुल निवेश का दो तिहाई है। जाहिर है पूँजी बाजार की इस राशि को यदि

इतिहास गवाह है कि साम्यवादी शासन व्यवस्था वाले सोवियत संघ ने आजादी के बाद से ही भारत में मनचाहा निवेश किया, ठेके पर असंख्य उद्योग। यही नहीं भारतीय रक्षा प्रणाली पर तो मानो सोवियत संघ का एकाधिकार ही रहा।

आधारभूत संरचना जैसे क्षेत्र में लगाया जाए तो इसका दूरगामी लाभ मिल सकता है। बजट से जुड़े ऐसे और भी उदाहरण सामने लाए जा सकते हैं, समग्रता में विचारने पर जिसके इसी तरह दोनों पक्ष सामने आएंगे। इन सबमें यहाँ विस्तार से जाना संभव नहीं।

अब जरा कुछ दूसरे पहलुओं पर नजर डालें। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जो लोग विदेशी पूँजी निवेश, विदेशी कंपनियों तथा सरकार द्वारा इनके प्रोत्साहन का विरोध कर रहे हैं उनका एक वर्ग वास्तव में केवल अमरीकी या पश्चिम देशों की पूँजी या उनसे संबंधित कंपनियों का ही विरोधी है। सच कहा जाए तो ये पूँजी निवेश या विदेशी कंपनियों के नहीं वरन् अमरीका
एवं कुछ पश्चिमी देशों के ही विरोधी
ये अगर बजट पूर्व दवाव आरोप लगा
तो इनका इशारा केवल इसी दिशा में
है। चीन की पूँजी में इन्हें कोई बुराई
नहीं आती और न ही चीनी कंपनियों के
विरोधी हैं। अगर आज साम्यवादी सो
संघ जीवित होता तो उसके पूँजी निवेश
उसकी कंपनियों के भारत में प्रसार का
ये विरोध नहीं करते। अभी चीन के
माल के व्यापक प्रवाह से भा
निर्माताओं के मन में उपजी आशंका
भारत के वामपंथी पार्टियों ने जो
अख्तियार किया वहीं इनकी
मनोदशा को स्पष्ट कर देता है।
चीन का सामान इतना सस्ता क्यों है
ठीक वही भारतीय सामान महँगा
तथा उपभोक्ता उनमें किससे लाभान्वि
रहे है – ये सब पहलू भी इससे
पर भारतीय निर्माता इससे दुष्प्रभावित
हैं, भारतीय उद्योगों पर इसकी मार
है, यह तो सत्य है। किंतु यहाँ
स्वदेशीपन की परिभाषा अलग है।
गवाह है कि साम्यवादी शासन
वाले सोवियत संघ ने आजादी के
ही भारत में मनचाहा निवेश किया,
असंख्य उद्योग। यही नहीं भारती
प्रणाली पर तो मानो सोवियत
एकाधिकार ही रहा। लेकिन विदेशी
निवेश के इन तथाकथित विरोधि
सोवियत संघ की पूंजी का स्वागत
यहाँ तक कि सोवियत संघ के रक्षा
का मुख्य खरीददार भारत रहा
कारण हमारी रक्षा प्रणाली परावलंबी
गई, पर भारत के वामपंथियों ने कभी
विरुद्ध आवाज नहीं उठाया। यह बा
है कि तत्कालीन परिस्थितियों की
विवशताएं थी। किंतु अगर भा
वामपंथी विदेशी पूंजी निवेश का
विरोध करते हैं या बजट पूर्व-
दबाव की बात करते हैं तो
समस्याओं की याद दिलाना आवश्य
वास्तव में अर्थव्यवस्था से उस
वाकिफ लोग यह बता सकते हैं कि
तरह सोवियत संघ एवं उसके समर्थ
के पूंजी निवेश एवं वहाँ की रक्षा

Scanned with OKEN Scanner

की खरीददारी के लिए बजटों में व्यवस्थाएं की जातीं थीं। कह सकते हैं कि तब वह समय की माँग थी। हालाँकि यह अपने-आपमें बहस का विषय है, पर कम से कम इससे इतना तो निष्कर्ष निकाला ही जा सकता है कि उदारीकरण के आरंभ एवं सोवियत संघ के विघटन के पूर्व बजट बनाते समय किसी न किसी तरह सोवियत संघ एवं उसके समर्थक देशों की इच्छाओं का ध्यान रखना पड़ता था। यह बात अलग है कि ऐसे दबावों के ठोस प्रमाण ढूँढ निकालना कठिन है। यदि इन ऐतिहासिक सच्चाईयों को ध्यान में रखें तो फिर उदारीकरण, पूंजी निवेश आदि का इन पक्षों द्वारा किए जा रहे विरोध या बजट पूर्व अमरीकी दबावों के इनके आरोपों के भुलावे में कोई नहीं आ सकता।

लेकिन इसका यह अर्थ कतई नहीं कि हम सरकार को क्लीन चिट दे दें या वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा के बजट निर्माण प्रक्रिया को दबाव रहित स्वच्छ प्रक्रिया घोषित कर दें। यह सत्य है कि श्री सिन्हा बजट पूर्व विचार-विमर्श प्रक्रिया में किसान एवं श्रमिक संगठनों के साथ भी बैठक करते हैं एवं उनका मेमोरेण्डम भी स्वीकारते हैं। पर जितनी विस्तृत चर्चा वे उद्योगपतियों, एसोचैम एवं सी.आई.आई. के प्रतिनिधियों से करते हैं, जितना महत्व वे इनके मेमोरेण्डम को देते हैं उसकी तुलना में किसान एवं श्रम संगठन प्रतिनिधियों के साथ बातचीत कहीं ठहरता ही नहीं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं विदेशी अर्थवेत्ताओं के सुझाव भी वित्तमंत्रालय में पर्याप्त महत्व पाते हैं। बजट निर्माण प्रक्रिया में पारदर्शिता न होने के कारण यह साफ-साफ बतलापाना कठिन होता है कि बजट में इनमें से किनकी बातों को कितना स्थान मिला। दरअसल, बाजार आधारित उदारवादी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का यह स्वाभाविक स्वरूप है कि यह विभिन्न हित समूहों के इर्द-गिर्द परिचालित होता है। ये हित समूह उद्योग के रूप में भी हो सकता है तो देश के रूप में भी। इनका विस्तार अंतर्देशीय हो सकता है तो अंतरराष्ट्रीय भी। इस व्यवस्था में सबकुछ गलत या अमानवीय हो ऐसा नहीं है। परंतु परस्पर हित साधने यानी व्याप्त संसाधनों में से अधिकाधिक पा लेने की प्रतिस्पर्धा इसमें एकदम स्वाभाविक है। जाहिर है इस प्राप्ति के लिए ये हित समूह जितना दबाव डाल सकते हैं उतना डालते हैं। जो देश इस व्यवस्था में विकसित हुए हैं उनके लिए इसमें कुछ भी बुरा नहीं है, इसी तरह जो लोग आर्थिक सुधार के नाम पर इसके पक्ष में हैं वे भी इसे गलत नहीं मान सकते। पर जो लोग इसके परे मनुष्य केंद्रित शोषण रहित देशानुकूल व्यवस्था के पक्षधर हैं – उनके लिए इसे सहन कर पाना संभव नहीं। वर्त्तमान सरकार अमरीकी एवं बड़े उद्योग समूहों के दबाव में बजट का निर्माण कर रही है या नहीं – इस संबंध में अलग-अलग राय हो सकती है। लेकिन अर्थनीति के स्तर पर सत्ता शिखर पर पहुँचने वाला मूलतः स्वदेशी एवं स्वावलंबन का राग अलाप कर भाजपा एवं पूर्व समाजवादियों के वर्चस्व वाली यह सरकार उदारवादी पूँजीवाद के परे वैकल्पिक अर्थनीति की दिशा में कुछ भी करती नजर नहीं आती, इसलिए बजट ही नहीं, इसकी पूरी अर्थनीति के संदर्भ में बड़े हित समूहों के पोषण का आरोप यदि लगता है तो इसे सहसा दरकिनार भी नहीं किया जा सकता। ■

चुनाव को देखते हुए वित्तमंत्री के सामने होंगी चुनौतियाँ

आगामी विधानसभा चुनाव को देखते हुए २००१-०२ के आम बजट को रखते समय वित्तमंत्री के रूख में कुछ नरमी की आशाएँ की जा सकती है क्या? क्योंकि लोकलुभावन घोषणाओं के बिना चुनाव के मैदान में खड़ा होना हानिकारक भी हो सकता है। दूसरी ओर अर्थव्यवस्था में व्याप्त मंदी को दूर करने के लिए सुधार के कड़े प्रयास भी जरूरी होंगे। चालू वित्त वर्ष में लघु उद्योग, कृषि एवं सेवाक्षेत्र अनेक परेशानियों से घिरा जाएँगे। चौथा बजट पेश करते हुए वित्तमंत्री राजस्व वसूली को बढ़ाने और व्यय नियंत्रण के उपाय करने का प्रयास कर सकते है। उनके सामने निवेश और आपूर्त्ति में वृद्धि कर देश की अर्थव्यवस्था के विकास को छः प्रतिशत ऊपर ले जाने की चुनौतियाँ है। तेल की वढ़ती अंतरराष्ट्रीय कीमतों को बनाएँ रखना, अमरीका की अर्थव्यवस्था के दुर्बल पड़ जाने और गुजरात के भूकंप के लिए वीस हजार करोड़ रुपए के आर्थिक नुकसान के कारण वित्तमंत्री को कड़ाई से आर्थिक सुधार के कदम उठाने की विवशता हो सकती है। इसके लिए सब्सिडी में कटौती राजकोषीय घाटे में कमी, लघु उद्योग क्षेत्र को मुक्त बाजार के अंतर्गत लाना, बैंकों की ब्याज दरें घाटा देना और पूंजी लागत में गिरावट लाना इत्यादि निराकरण के उपाय किए जा सकते है। वढ़ते राजकोषीय घाटे की पूर्ति के लिए लाभांश कर छोड़ा नहीं जा सकता। अधिभार हटाकर और कर दरों को कम कर उद्योग एवं व्यापार जगत की माँगों की पूर्ति करना भी संभव नहीं दिखता। किंतु पाँच राज्यों में होने वाले विधानसभाओं के चुनावों को देखते हुए लोकलुभाव घोषणाएं भी करनी ही होगी। सहयोगी दलों के दबाव को भी नकारा नहीं जा सकता। इस प्रकार एक ओर खाई है तो दूसरी ओर कुआँ। ■

Scanned with OKEN Scanner

विश्व व्यापार संगठन और भार को क्या कार्यभाग अदा करना चाहि

■ रुद्रदत्त

विश्व व्यापार संगठन एक वास्तविकता है और भारत जो कि इसके संस्थापक सदस्यों में से है, को इसकी परिधि के भीतर ही कार्य करना होगा। किंतु विश्व व्यापार संगठन के ढांचे के अंदर ही काफी गुंजाइश है और भारत को इसका लाभ उठाकर अपने हितों की रक्षा करनी चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, निम्नलिखित दिशाओं में प्रयास किए जाने चाहिए :–

१. विश्व व्यापार संगठन की सभाओं के लिए पर्याप्त तैयारी – यह अनुभव किया गया है कि विश्व व्यापार संगठन की सभाओं में भाग लेने के लिए जितनी तैयारी की आवश्यकता है, वह हमारे औपचारिक प्रतिनिधि मंडलों द्वारा प्रदर्शित नहीं की गयी। चूंकि विश्व व्यापार संगठन का विधान अत्यधिक विस्तृत एवं जटिल है, इस कारण यह अत्यंत आवश्यक है कि भारत संगठन के दौरान बातचीत में तीन बुनियादी गुणों का प्रदर्शन करें - (१) हमारे लक्ष्यों एवं विकास रणनीति के बारे में स्पष्ट दृष्टिकोण, (२) हमारी रणनीति संबंधी विकल्पों के बारे में एक सही सूझबूझ और सौदेबाजी के बिंदुओं की पहचान, (३) एक-सी सोच वाले विकासशील देशों और विकसित देशों से भी प्रभावी तालमेल ताकि संधि-वार्ता पर प्रभावशाली कार्य किया जा सके।

मृत्यु के किनारे तक बीमार औद्योगिक इकाई से न तो संसाधनों का कुशल आवंटन होता है और न ही रोजगार-जनन में सहायता मिलती है।

२. विश्व व्यापार संगठन के बारे में अधिक जागरूकता : यह अत्यंत दुःख की बात है कि भारत अपनी सुप्त अवस्था से तब जागा जबकि इसके हल्दी, बासमती और दार्जिलिंग चाय के पेटेंट कि की खबरें विदेशों से प्राप्त हुईं। जागरूकता के का परिणाम इन क्रियाओं को समय रहते चुनौती है। अत: भारत करे अपनी सूचना प्रणाली उन्नत होगी और ऐसी गतिविधियों का विरोध करने तुरंत कार्यवाही करनी होगी। सूचना तकनोलॉजी प्रगति होने के कारण ऐसी सूचना प्राप्त करना कठि परंतु कार्यवाही करने के बारे में अफसरशाही वि काटना होगा।

३. राशिपातन-विरोधी उपायों को बनाना – हाल ही के वर्षों में राशिपातन की देखी गयी हैं और कुछ देश, विशेषकर चीन, रा का प्रयोग करके भारतीय बाजार पर कब्जा लगातार प्रयास करते रहे हैं। परंतु विश्व व्यापार में राशिपातन को चुनौती देने के लिए आवश्यक निम्नलिखित विषयों के बारे में तथ्य एकत्र कि और वे प्रमाण के साथ पेश किए जाएं - (१) रा का विद्यमान होगा, (२) देशीय उद्योग को क्षति राशिपातन और औद्योगिक क्षति के बीच कार संबंध स्थापित करना। इन सबके लिए ध्यानपूर्वक एकत्र करने की जरूरत है, एकत्र सूचना एवं स सुनिश्चित विश्लेषण कर इसे विश्व व्यापार सं सामने पेश करना होगा ताकि राशिपातन संबंधी में भारत के पक्ष में विजय प्राप्त की जा सके

४. कानूनी विशेषज्ञता का विकास : व्यापार संगठन को कानूनी प्राधिकार प्राप्त है प्रकार नयी व्यापार प्रणाली के नियमों एवं अनुशा पालना कराने की ताकत भी इसके पास है। कि जब विश्व व्यापार संगठन के सामने भार मामले पेश किए जाते है या अन्य देशों द्वारा विरुद्ध मामले दर्ज किए जाते हैं, तो इन मामलों में कानूनी स्तर पर बहस करनी पड़ती है। इस

Scanned with OKEN Scanner

के लिए, कानूनी विशेषज्ञता का विकास अनिवार्य है। अतः इसके लिए उचित होगा कि कानूनी संस्थानों में विश्व व्यापार संगठन को एक विषय के रूप में चालू किया जाए ताकि समय के साथ-साथ विश्व व्यापार संगठन पर कानूनी विशेषज्ञता का विकास हो सके। आज इस प्रकार की विशेषज्ञता का अभाव है। चूंकि विश्व व्यापार संगठन संबंधी मुकद्मे यू.एस.ए. में लड़ने पड़ते हैं, इसलिए यह अनिवार्य कि ये विशेषज्ञ, बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा नियुक्त विदेशी कानूनी विशेषज्ञों का प्रभावी रूप में मुकाबला कर सकें। सरकार को चाहिए कि कानूनी मुकदमों पर होने वाले खर्च का कुछ भाग साहाय्य के रूप में उपलब्ध कराए क्योंकि इन पर बहुत ज्यादा खर्च करना पड़ता है।

५. देशी आर्थिक एजेंटों को ध्यान में रखकर भारतीय बाजारों को खोलना – यह देखा गया है कि भारत अपने बाजारों को बहुत अधिक सीमा तक विदेशियों के लिए खोलता जा रहा है जबकि तुलना की दृष्टि से अन्य देश अपने बाजारों को भारत के लिए कम खोल रहे हैं। दूसरे शब्दों में यह कहना सही होगा कि भारत टैरिफ-कम करने की वचनबद्धता का आवश्यकता से अधिक परिपालन कर रहा है। उदाहरणार्थ, दुग्ध उत्पाद के संदर्भ में १९९९ में, दूध के पाऊडर के लिए अधिकतम टैरिफ दर योरोपीय संघ में ९९ प्रतिशत, जापान में ३३६ प्रतिशत, कनाडा में २१३ प्रतिशत, कोरिया में २११ प्रतिशत थी परंतु इनके विरुद्ध भारत में यह दर शून्य थी। भारत आयात पर परिमाणात्मक प्रतिबंधों को हटाने की प्रक्रिया में भी बहुत तेजी से कार्य कर रहा है। भारत ने १ अप्रैल २००० से ७१४ मदों पर परिमाणात्मक प्रतिबंध हटा लिए और कुल १,४२९ मदों में से शेष ७१५ मदों पर मार्च ३१,२००१ तक प्रतिबंध हटा लिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त, ८१२ में से ५७६ मदें जो लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित थीं और पहले परिमाणात्मक प्रतिबंधों से संरक्षित थी, अब खुली सामान्य लाइसेंस प्रणाली पर हैं। जबकि विकसित देश भारत जैसे विकासशील देशों पर परिमाणात्मक प्रतिबंध हटाने के लिए दबाव डालते रहते हैं, वे स्वयं निर्बाध प्रवेश के विरुद्ध गैर-टैरिफ अवरोधकों के नेटवर्क का विस्तार करते रहते हैं और इसके लिए पर्यावरण संबंधी चिंताओं, श्रम-मानदण्डों, बाल-श्रम आदि जैसे मुद्दे उठाते रहते हैं। उदाहरणार्थ, एक अंतर्राष्ट्रीय अनुमान के अनुसार १९९८ में २२ गैर-टैरिफ अवरोधक, योरोपीय संघ में १६, ऑस्ट्रेलिया में ९ और यू.एस.ए. में ४ अवरोधक कार्य कर रहे थे।

विश्व व्यापार संगठन के प्रति जरूरत से ज्यादा झुकने की नीति का परित्याग करना होगा। देशीय आर्थिक एजेंटों के हितों को ध्यान में रखना होगा। भारत के देशीय उद्योग के हित में टैरिफ अवरोधकों का अनुज्ञेय सीमाओं तक

१९९०-१९९८ के दौरान भारत में रोजगार की स्थिति

लाखों में

क्षेत्र		कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाएँ	गैर-कृषि क्रियाएं	कुल
ग्रामीण	१९८०	२४.५	२२०.२	२२४.७
	१९९०	४२.३	२९०.६	३३२.९
	१९९८	४८.८	२४४.२	२९३.०
कुल परिवर्तन	१९८०-९०	+ १७.८	+ ७०.४	+ ८८.२
	१९९०-९८	+ ६.५	- ४६.४	- ३९.९
शहरी				
	१९८०	४.०	२८८.०	२९२.०
	१९९०	५.३	३८२.५	३८७.८
	१९९८	६.८	३५०.६	३५७.४
कुल परिवर्तन	१९८०-९०	+ १.३	+ ९४.५	+ ९५.८
	१९९०-९८	+ १.५	- ३१.९	- ३०.४
कुल				
	१९८०	२८.५	५०८.२	५३६.७
	१९९०	४७.६	६७३.१	७२०.७
	१९९८	५५.६	५९४.८	६५०.४
कुल परिवर्तन	१९८०-९०	+ १९.१	+ १६४.९	+ १८४.०
	१९९०-९८	+८.०	-७८.३	-७०.३
वार्षिक औसत वृद्धि दर (%)				
ग्रामीण	१९८०-९०	+५.६२	+२.८१	+३.१३
	१९९०-९८	+१.८०	-२.१५	-१.५८
शहरी	१९८०-९०	+२.९३	+२.८८	+२.८८
	१९९०-९८	+३.१५	-१.०८	-१.०१
कुल	१९८०-९०	+५.२८	+२.८५	+२.९९
	१९९०-९८	+१.९६	-१.५३	-१.२७

इनमें फसल उत्पादन और बागान को छोड़ अन्य क्रियाएं शामिल की गयी है।

स्रोत : इकनामिक सैंमस १९९० और १९९८ से संकलित एवं परिकलित

विस्तार करना चाहिए। इससे देशीय उद्योग को राहत प्राप्त होगी। इस बीच भारत को देशीय उद्योग को, विशेषकर लघु स्तर उद्योग को, मजबूत करना होगा ताकि यह प्रतिस्पर्द्धा का सामना कर सके। यह बात ध्यान में रखनी होगी कि अर्थव्यवस्था को बेलगाम खोल देने से लघु उद्योगों पर सबसे अधिक दुष्प्रभाव पड़ेगा। परिमाणात्मक प्रतिबंधों और अन्य टैरिफ एवं गैर-टैरिफ अवरोधकों को धीरे-धीरे हटाने की नीति लघु उद्योग के लिए हितकारी होगी। इसके साथ-साथ देश को आधार संरचना और ऋण के रूप में लघु स्तर उद्योगों को आलम्बन देना होगा, ताकि यह क्षेत्र विश्व-आयात का अच्छी प्रकार मुकाबला कर सके।

६. विदेशी आयात और भारत में रोजगार की क्षति की समस्या – हाल ही में, १९९८ की आर्थिक गणना से रोजगार के बारे में सूचना प्राप्त हुई है। इन आंकड़ों की १९९० के आंकड़ों से तुलना करने से पता चलता है कि १९९०-९८ के दौरान वैश्वीकरण और उदारीकरण के परिणामस्वरूप ७० लाख नौकरियों की हानि हुई जिसमें से ४० लाख की हानि ग्राम क्षेत्रों में और ३० लाख की शहरी क्षेत्रों में हुई। समग्र देश के लिए रोजगार की वृद्धि दर १९९०-९८ के दौरान १.

Scanned with OKEN Scanner

२७ प्रतिशत तक नकारात्मक हो गयी है – १.५८ प्रतिशत ग्राम क्षेत्रों के लिए और १.० प्रतिशत शहरी क्षेत्रों के लिए। चूँकि देश में श्रमशक्ति की औसत वृद्धि दर २.४ प्रतिशत प्रति वर्ष है, अतः विश्व व्यापार संगठन के प्रभाव का यह सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण परिणाम है। श्री जय दुबाशी, भारतीय जनता पार्टी से जुड़े हुए एक सूझ-बूझ रखने वाले अर्थशास्त्री ने विश्व व्यापार संगठन के दुष्प्रभाव के फलस्वरूप लघु तथा मध्यम उद्योगों की मार्मिक दशा का चित्र इस प्रकार खींचा है –

"विदेशी आयात ने भारत में हजारों लघु तथा मध्यम उद्योगों को समाप्त कर दिया है। एक अनुमान के अनुसार इनकी संख्या ४,००,००० है। बहुत से उद्योग मुम्बई, थाना-बेलापुर, भिवंडी, औरंगाबाद, कानपुर, अलीगढ़, इंदौर और कई अन्य नगरों में बंद हो गए हैं . . . भिवंडी में लगभग ६० प्रतिशत बिजली चालित करके खामोश पड़े हैं। अलीगढ़ में, छोटी फर्में जो ताले और अन्य हार्डवेयर का सामान बनाती थीं, ने भी अपने शटर नीचे कर लिए हैं। यदि आप मुम्बई में थाने-बेलापुर का दौरा करें, तो लगभग सभी कारखानों को बंद पाएंगे। चूँकि प्रत्येक व्यक्ति साफ्टवेयर इंजीनियर नहीं बन सकता और सिलीकॉन वैली में नौकरी प्राप्त नहीं सकता, लाखों व्यक्तियों को अपनी नौकरियों से हाथ धोने पड़े हैं।" (संडे टाइम्स, अक्टूबर २२, २०००)

७. विश्व व्यापार संगठन और कृषि संबंधी अर्थ साहाय्य – कृषि-आधारित साहाय्य भारत में वाद-विवाद का विषय रहे हैं। इस संबंध में कृषि के बारे में विश्व व्यापार संगठन की संधि के प्रति कुछ आशंकाओं को स्पष्ट करना प्रासंगिक होगा। कृषि-पर-संधि के अधीन, किसी विकासशील देश का अपने वस्तु-विशिष्ट और गैर-वस्तु-विशिष्ट समग्र-आलम्बन का माप कृषि-उत्पाद की कुल मात्रा के १० प्रतिशत (एक विकासशील देश के लिए ५ प्रतिशत) से अधिक न हो, तो उस पर किसी अर्थसाहाय्य को कम करने की बचनबद्धता लागू नहीं होती। यह ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह दायित्व समग्र आलम्बन प्रमाण पर लागू होता है और इस समग्र सीमा के भीतर किसी देश को यह स्वतंत्रता प्राप्त है कि वह किसी वस्तु या अर्थसाहाय्य की सीमा के बीच लोचशीलता की नीति अपना सकता है। जहां तक भारत का संबंध है कुल आलम्बन प्रमाण १९९० के दशक के प्रत्येक वर्ष के लिए नकारात्मक ही पाया गया। जाहिर है कि भारतीय कृषि पर विश्व व्यापार संगठन के आधीन अपने अर्थसाहाय्यों को कम करने का कोई दायित्व नहीं है।

विश्व व्यापार संधि का उल्लंघन करने वाले मुख्य दोषी तो विकसित देश हैं जिन्होंने इस संधि की पालन करने की अपेक्षा इसका अधिक अतिक्रमण किया है। १९९७-९९ के दौरान, उत्पादक अर्थसाहाय्य (जो कुल आलम्बन प्रमाप का कार्यकारी विकल्प है) योरोपीय स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र (विशेषकर नार्वे, स्विटजरलैंड और आइसलैंड में) में ६० प्रतिशत से अधिक था और पूर्व एशियाई क्षेत्र (विशेषकर जापान और कोरिया में) पी... प्रतिशत से अधिक था। यह बात ध्यान देने योग्य है ... उत्पादक-अर्थ साहाय्य योरोपीय संघ, टर्की एवं ओ.ई.सी.डी. ... के लिए ३० से ४५ प्रतिशत के बीच है। यू.एस.ए., कना... चैकोस्लोवाकिया, मैकिसको और पौलेण्ड के लिए ये १५ से ... प्रतिशत के बीच थे। ये कृषि-पर-संधि द्वारा निर्धारित सीमा से ... ज्यादा है।

इन तथ्यों के प्रकाश में, भारत को अन्य विकासशील ... के साथ समन्वय करके विकसित देशो पर दबाव डालना होगा ... वे अपने कृषि-अर्थसाहाय्य कम करें। विश्व व्यापार संगठन के ... का प्रयोग विकसित देश पर दबाव डालने के लिए किया ... चाहिए ताकि वे कृषि-पर-संधि का पालन करें। तभी विकास... देशों से कृषि-वस्तुओं का निर्यात विकसित देशों को बढ़ स... है। विकसित देश जो बार-बार स्वतंत्र व्यापार की रट लगाते ... विश्व व्यापार संगठन के उचित व्यापार संबंधी नियम का ... पालन करें।

८. श्रमशक्ति की गुणवत्ता को उन्नत करना – ... अर्थव्यवस्था में, ज्ञान-आधारित श्रमिक ही वस्तुओं की गुण... को उन्नत कर सकते हैं और इस प्रकार आयात की प्रतिस्पर्द्धा ... सामना करने में सहायता प्रदान कर सकते हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वे ... के अनुसार, ४४ प्रतिशत ग्रामीण-पुरुष और ८० प्रतिशत ग्रा... महिलाएं पूर्णतया अनपढ़ थे, और इस संबंध में तदनुरूप आं... शहरी क्षेत्रों के लिए क्रमशः १९ प्रतिशत और ४८ प्रतिशत थे। ... ओर, सेकेण्डरी और उच्च स्तर शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों में केवल ५ प्रतिशत ग्रामीण-पुरुष और २.५ प्रतिशत ग्रामीण-स्त्रियाँ थीं ... कि इनका अनुपात शहरी-पुरुषों में ४० प्रतिशत और शहरी-... में २६ प्रतिशत था। अतः घटिया मानव-पूंजी आधार के रू... स्थिति वस्तुतः निराशाजनक है। इसके साथ-साथ यदि इस ... को भी ध्यान में रखा जाए कि हमारे प्रशिक्षित इंजीनियरों, कम... हार्डवेयर और साफ्टवेयर तकनीशनों, प्रशिक्षित डॉक्टरों, प्रबंध-स्ना... का एक बड़ा अनुपात विदेशों में ही बस जाता है, तब ... दिमाग-निकास के कारण हमारी प्रशिक्षित मानवशक्ति के सं... और भी क्षीण हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, भारत में कार्य... रहे बहुराष्ट्रीय निगम अधिक वेतन देकर हमारे बुद्धिजीवियों ... क्रीम को हड़प लेते हैं और इस प्रकार देशीय उद्योग के लिए ... से कुशल व्यवसायिक बच पाते हैं। नयी अर्थव्यवस्था ने चयना... रूप में अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त वर्ग का ही ध्यान किया है ... श्रमिकों के अधिकांश भाग को वैश्वीकरण की चुनौतियों का सा... करने के लिए निःसहाय छोड़ दिया है। इसलिए राज्य सरकार ... लिए यह अनिवार्य है कि श्रमिकों की शिक्षा के प्रोग्राम चालू ... ताकि श्रमशक्ति की गुणवत्ता उन्नत की जा सके और श्रम... की गुणवत्ता को उन्नत कर भारतीय उद्योग की उत्पादिता ... कुशलता बढ़ायी जा सकती है।

Scanned with OKEN Scanner

भारत की कृषि को हथियाने का विदेशी-तकनीकि

देवेंद्र शर्मा

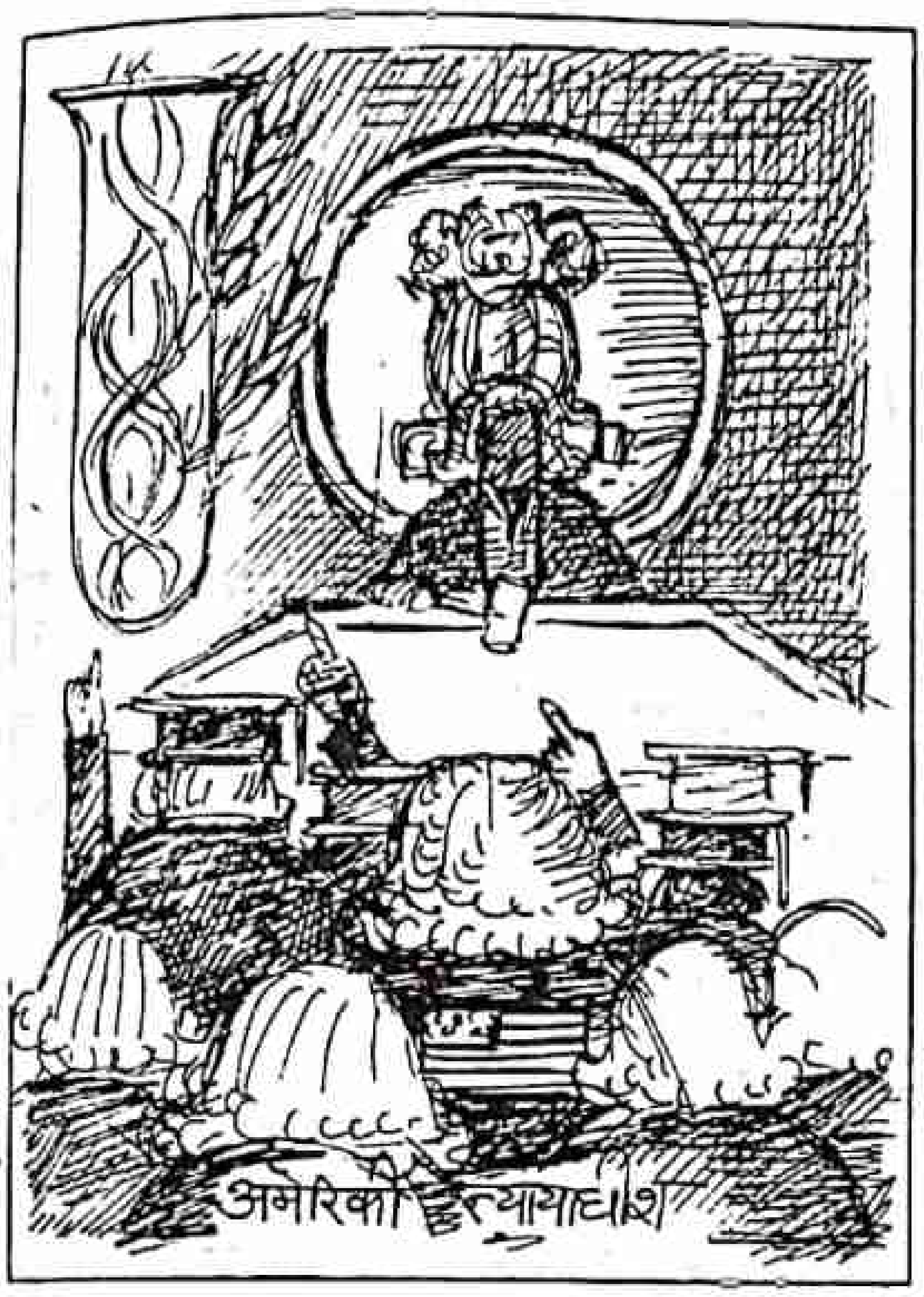

जनवरी के प्रारंभ में कर्नाटक के एक किसान की खेत से जीन (वंशाणु) संवर्द्धित कपास के पौधे को उजाड़ने की ताजा घटना एक निजी टी.वी. चैनल पर देखने के बाद मुझे यह स्पष्ट हो गया कि भारतीय उद्योग महासंघ जैव प्रौद्योगिकी से संबंधित विवादों को उच्चतम न्यायालय में निपटने की राय क्यों दे रहा है। अगले दिन 'द हिन्दू' में छपे एक समाचार से मुझे इस विषय की उपयोगिता महसूस हुई। समाचार में था कि अमरीका के दस न्यायधीशों की एक टोली भारतीय उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति ए०एस०. आनंद से मिली और उन्हें जैव प्रौद्योगिकी से होने वाले लाभ के विषय में बताया। साथ ही उन्हें प्रभावित करने की कोशिश की। इस समाचार में 'इंडियन साइंस काँग्रेस', नयी दिल्ली में जीन तकनीक के पक्ष में बोलने वाले अमरीका के आइंसटीन इंस्टीच्यूट फॉर साइंस, हेल्थ एण्ड द कोर्ट्स के अध्यक्ष डॉ. फ्रैंकलीन एम. ज्वेग को भी कोट किया गया था।

मुख्य न्यायाधीश से अमरीकी प्रतिनिधि मंडल के मिलने के बारे में पूछने पर डॉ. ज्वेश ने इस बात से इनकार किया कि उन्होंने न्यायाधीश को प्रभावित करने की कोशिश की। लेकिन, उन्होंने कहा कि यह भेंट न्यायधीश को न्यायलय एवं न्यायालयी प्रयोग में जन-सूचना के विषय में शिक्षित करने के लिए की गई थी।

अमरीकी प्रतिनिधि मंडल ने अमरीका के मुख्य न्यायधीश से कहा है कि वे अमरीका में भारतीय न्यायधीशों को बुलाकर उन्हें ट्रांसजेनिक, बायोतकनीक खोज में सुरक्षा प्रतिमानों के विषय में शिक्षित करने हेतु एक 'कार्यशाला' आयोजित करे। इस प्रतिनिधिमंडल में कुछ भारतीय अमरीकी वैज्ञानिक भी शामिल थे। उन्होंने इस विषय में अपनी धारणा स्पष्ट की। वे विभिन्न देशों के बीच जीन तकनीक के विषय में एक आचार संहिता बनाने का प्रयास कर रहे हैं। ठीक इसी समय, ब्रिटिश काउसिंल ने भारत में छः जैव तकनीकि विशेषज्ञों को अपने वार्षिक 'ब्राइट स्पार्क्स फीचर' के लिए बुलाया। इन वैज्ञानिकों ने देश के विभिन्न भागों का दौरा कर – देश में वैज्ञानिक जागरण पैदा करने के नाम पर ब्रिटिश बायोतकनीक का प्रचार किया। यह जानना रोचक है कि ब्रिटेन और पूरे यूरोप में बायोतकनीक से पैदा उत्पादों का बाजार घट रहा है लेकिन ब्रिटिश सरकार अभी भी बायोतकनीक को बढ़ावा दे रही है। इसके लिए इससे अच्छा क्या हो सकता है कि भारत में इसे बढ़ावा दिया जाए जहाँ न तो नौकरशाही को इससे कोई मतलब है न ही कोई नीति है।

भारतीय विज्ञान कांग्रेस की मिंटिंग में आम जनता से यह कहने की कोशिश की गई कि वैज्ञानिक समुदाय पूरी तरह से जैव तकनीक के पक्ष में है। कांग्रेस में उन्हीं वैज्ञानिकों और विचारकों को आमंत्रित किया गया जो जीन तकनीक के प्रति मधुरभाव रखते हैं। किसी भी जीन तकनीक विरोधी एन.जी.ओ. या वैज्ञानिक को आमंत्रित न कर कांग्रेस ने यह दिखाया या संदेश प्रचारित किया कि भारत में भोजन की कमी दूर करने का एकमात्र उपाय जीन तकनीक है।

यह चकित करता है, कि जब वैज्ञानिक ही अगली शताब्दी के पहले चतुर्थांश में स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संबंधी समस्याओं को पैदा करने वाली जीन तकनीक को ही भारत में अन्न समस्या का एकमात्र हल मानते हैं तब सरकार भारतीय किसानों को खाद्यान्नों को छोड़ कर अन्य (व्यावसायिक) कृषि उत्पादों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहित कर

भारतीय विज्ञान कांग्रेस की मिंटिंग में आम जनता से यह कहने की कोशिश की गई कि वैज्ञानिक समुदाय पूरी तरह से जैव तकनीक के पक्ष में है। कांग्रेस में उन्हीं वैज्ञानिकों और विचारकों को आमंत्रित किया गया जो जीन तकनीक के प्रति मधुरभाव रखते है।

Scanned with OKEN Scanner

रही है। इसी वर्ष सितंबर-अक्टूबर में एफ. सी.आई. फूड कारपोरेशन ऑफ इंडिया) विभिन्न राज्यों से माँग से अधिक उत्पादन को खरीद नहीं सकती। ज्ञात प्रमाणों के अनुसार अबतक के सर्वाधिक ५० मिलियन टन अनाज के अतिरिक्त भाग को देखते हुए सरकार ने किसानों को कम उत्पादन के लिए कहा है।

अत: या तो सरकार सामने आने वाली अन्न की समस्या से परिचित नहीं है या वैज्ञानिक यथार्थ से परिचित नहीं है। सच्चाई यह है कि वैज्ञानिक विशेषत: बायोतकनीकी विशेषज्ञ अपने प्रयोगशाला से वाहर देखने के लिए तैयार नहीं हैं। वैज्ञानिकों को यह समझना होगा कि वर्तमान बदलती हुई वैश्विक आर्थिक परिस्थितियों में, विकसित देशों में उत्पादन को सर्वोच्च स्तर तक पहुँचाने के लिए बायोतकनीक का उपयोग किया गया दुनिया के किसी भी विकसित देश में विकासशील देशों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए खोज नहीं किए गए। इस तकनीक से यह आशा करना निरर्थक है कि वह विकासशील देशों के छोटी जोतों एवं बढ़ते कृषि कर्ज से दबे हुए किसानों को बचाएगा और कृषि में उनकी आस्था पुनर्स्थापित करेगा।

भारत जैसे बड़ी जनसंख्या वाले राष्ट्रों के ही कृषि व्यवस्था से यहाँ अन्न उत्पादन होगा। किसान न केवल साधनों की कमी से ग्रस्त है बल्कि उनके पास धन और बाजार भी नहीं है, साथ ही उनमें से ज्यादतर वंजर या कम उपजाऊ या बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों के है। पहले भी ये किसान हरित क्रांति को नहीं अपना पाए क्योंकि यह उनके मिट्‌टी जल या व्यवस्था से मेल नहीं करती थी। ठीक इसी तरह जैव तकनीक भी उनके लिए मृगमरीचिका ही सावित होगी और उनकी समस्याओं को वढ़ाएगी।

वैज्ञानिकों को यह समझता होगा कि भारत में आवश्यक अन्न का उत्पादन छोटे किसान कृषि-पर्यावरणीय तकनीक के द्वारा करते है। दूसरी तरफ बायोतकनीक में बड़े निवेश से हमें अपेक्षित परिणाम नहीं मिल

> ***किसान न केवल साधनों की कमी से ग्रस्त है बल्कि उनके पास धन और बाजार भी नहीं है, साथ ही उनमें से ज्यादत बंजर या कम उपजाऊ या बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों के है। पहले भी किसान हरित क्रांति को नहीं अपना पाए क्योंकि यह उनक मिट्‌टी जल या व्यवस्था से मेल नहीं करती थी। ठीक इस तरह जैव तकनीक भी उनके लिए मृगमरीचिका ही साबि होगी और उनकी समस्याओं को बढ़ाएगी. . . . . .वैज्ञानि को यह समझता होगा कि भारत में आवश्यक अन्न उत्पादन छोटे किसान कृषि-पर्यावरणीय तकनीक के द्वा करते है। दूसरी तरफ बायोतकनीक में बड़े निवेश से ह अपेक्षित परिणाम नहीं मिल सकता।***

सकता। कॉरपोरेटो के बायोतकनीक से संबंधित कानूनी अधिकार निश्चित रूप से सार्वजनिक संस्थाओं के फसलों की नई प्रजातियों के विकास में निश्चित रूप से बाधा पहुँचाएंगे। इसके अलावा बीजों एवं फसलों के वितरण की व्यवस्था के निजीकरण होने के कारण भी वे छोटे किसानों की अपेक्षा बड़े एवं व्यावसायिक फार्मों पर ध्यान देंगे। इस बात को उच्चतम एवं उच्च न्यायलय के विद्वान न्यायधीशों को कौन समझाएगा?

जैसे-जैसे जीन तकनीक व्यावसायिकता की तरफ बढ़ती जा रही है उसके पीछे विद्वान भी चल रहे है और आज ज्यादातर वैज्ञानिक विभिन्न जैव तकनीक कंपनियों के साथ जुड़े रहे है जिससे उनकी स्वयं समीक्षा की संभावनाएं कम हो जाती है। इसके एक विघ्नकारक प्रभाव को यू.के. के रॉयल सोसायटी द्वारा प्रस्तुत किया गया। यह रिपोर्ट एक स्काटलैण्ड के वैज्ञानिक ने १९९८ में प्रस्तुत किया था जिसका व्यापक स्तर पर कंपनियों से जुड़े वैज्ञानिकों ने विरोध किया और उनके दबाव में रॉयल सोसायटी ने कारॅपोरेटो के लाभ के लिए काम किया। समाचार संपादकों को यह याद रहना चाहिए कि वे केवल उन्हीं वैज्ञानिकों के विचारों को उद्धृत करते हैं जिनके नाम सोसायटी द्वारा दिए जाते हैं।

ध्वनि विज्ञान का उपयोग राजनीतिज्ञों एवं कॉरपोरेशनों के द्वारा जनता के ध्या दिशा बदलने के लिए किया जाता है। तो यह है कि इस ध्वनि विज्ञान के उपयोग विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा भी कि रहा है। गलत प्रभावों को दर्शाने वाले निष्कर्ष का बड़े पैमाने पर विरोध और विवादास्पद करार दिया जाता बार उसे वैज्ञानिकों की एकता को वाला भी घोषित कर देते है।

ध्वनि विज्ञान अब अच्छे विज्ञा जगह लेता जा रहा है और अब तो वि करने वाली संस्थाएं भी जनता के ध्या टकटकी को पथभ्रष्ट करने में लग ग उदाहरण स्वरूप अमरीका की द फूड *ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन* (एफ.डी.ए.) ने जीन तकनीक से उत्पादित वस्तु पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को वाले वैज्ञानिकों को अपने पुनर्रीक्षण का से हटा दिया है। भारत में भी, जैव तक विभाग (डीबीटी) पिछले तीन व 'मोनसेंटो-माहिको' द्वारा जीन तकनी उत्पादित कपास के पौधे का प्रचार क है। आश्चर्य तो यह है कि यह काम पूरा होने के पहले से ही हो रहा है। ज्यादा गलत तो यह है कि सार्वज संस्थाओं में काम करने वाले वैज्ञानिक इसी से सहमत है। कोई भी इसका वि करना नहीं चाहता और यही विज्ञान भविष्य के लिए खतरे की बात है।

Scanned with OKEN Scanner

किसान को गाय क्यों नहीं रास आती है

डॉ. भरत झुनझुनवाला

एक व्यक्ति ने अपना बचपन गायों को चराने में व्यतीत किया। दूसरे को जन्म लेते ही गरम रखने के लिए गाय की नांद में डाल दिया गया। एक हुए श्रीकृष्ण और दूसरे हुए ईसा मसीह। लेकिन आज वध से बचाई गई गायें लावारिस घूमती हैं और धीरे-धीरे मरती है। समाज उन्हें पालने को तैयार नहीं है। इसका एक कारण यह है कि तकनीकी बदलाव ने गाय को नुकसानदेह बना दिया है। दूसरा कारण यह है कि समाज को गाय के लाभ का ज्ञान नहीं है और सरकारी नीतियाँ इस अज्ञान को प्रोत्साहन दे रही हैं। गाय प्रेमियों को चाहिए कि समाज के गाय के प्रति इस अज्ञान को दूर करें तथा सरकारी नीतियों को ठीक कराएँ। कानून से गोवध नहीं रोका जा सकता।

किसान पशु विरोधी नहीं है। गाँव में जितना चारा उपलब्ध है कि वह किसी न किसी पशु को खिलाता ही है। मुख्य प्रश्न पशुधन की सार्थकता का नहीं है बल्कि गाय बनाम भैंस का है। जैविक खेती के लिए गोबर भैंस और गाय दोनों से बराबर मिलता है। देशी नस्लों के सुधार से गाय भैंस दोनों के दूध में वृद्धि हो सकती है। अहिंसा एवं जीवदया के सिद्धांत बछड़े एवं पाड़े दोनों पर बराबर लागू होते हैं। इसलिए हमें देखना यह चाहिए कि आज किसान गाय के स्थान पर भैंस को क्यों पसंद कर रहा है।

गाय से पहला लाभ दूध की गुणवत्ता का है। दूध के दो हिस्से होते हैं फैट तथा सालिड नान फैट अथवा एस.एन.एफ.। गाय तथा भैंस के दूध में फैट की क्वालिटी एक सरीखी ही होती है।

गाय से पहला लाभ दूध की गुणवत्ता का है। दूध के दो हिस्से होते हैं फैट तथा सालिड नान फैट अथवा एस.एन.एफ.। गाय तथा भैंस के दूध में फैट की क्वालिटी एक सरीखी ही होती है। वनस्पतियों से मिले तेल से भी फैट की पूर्ति हो सकती है। आधुनिक डेरी में दूध में फैट कम होने पर वनस्पति तेल डालकर उसकी पूर्ति की जाती है। दूध के गुण तथा उसका दूधत्व मुख्य रूप से एस.एन.एफ. से उत्पन्न होता है। दोनों दूध में अंतर यह है कि भैंस के दूध में फैट अधिक होता है जबकि गाय के दूध में एस.एन.एफ. ।

बच्चे के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी यह होगा कि उसे गाय का दूध पिलाया जाए जिसमें एस.एन. एफ. ज्यादा होता है। फैट की आपूर्ति वनस्पति तेलों के माध्यम से की जा सकती है। भैंस का दूध मूल रूप से अच्छा नहीं है। कारण यह है कि हम पशु से फैट उत्पादन का कार्य लेते हैं जिसे वनस्पतियाँ कर सकती हैं, और जो एस.एन.एफ. दूसरे स्रोतों से नहीं मिलता है उससे हम बच्चे को वंचित करते हैं। यूँ समझिए कि वनस्पति से सीधे फैट उत्पादन करने के स्थान पर भैंस के माध्यम से उसका का उत्पादन करना अकुशल उत्पादन पद्धति है। जो कार्य वनस्पतियाँ सीधे कर सकती हैं वह उनसे सीधा कराया जाना चाहिए। चूँकि वनस्पतियाँ एस.एन.एफ. का उत्पादन नहीं कर सकती हैं अतः यह कार्य पशुओं के माध्यम से कराना ही होगा। इसलिए गाय के दूध तथा वनस्पति तेल का मिश्रण अधिक लाभकारी है। गाय के दूध की उत्कृष्टता का प्रमाण यह है कि गाँव के उच्च वर्ग के लोग अपने बच्चों को गाय का दूध पिलाते हैं। मान्यता यह है कि उनके बच्चे औसत से अधिक बुद्धिमान होते हैं अथवा उनका आई.क्यू. अधिक होता है। नवजात शिशु एवं सौरी में स्त्री को भी गाय का दूध पिलाया जाता है।

परंतु हमारे विद्वानों ने दूध की खरीद एस.एन. एफ. के आधार पर नहीं बल्कि फैट के आधार पर करना शुरू कर दिया है। गृहणी को इस बात की जानकारी नहीं दी गई कि यदि वह अपने बच्चों को गाय का दूध पिलाएगी तो उनका आई.क्यू. बढ़ जाएगा। उसे यह बताया गया कि भैंस के दूध में मलाई अधिक पड़ेगी और दही-गाढ़ा जमेगा। नतीजा यह हुआ कि

भैंस का दूध महगा बिकने लगा और गाय कटने लगी। आवश्यकता इस बात की है कि गृहणी को बताया जाए कि गाय का दूध पिलाने से बच्चे का विकास अच्छा होगा वह तीव्र बुद्धि वाला होगा। फैट की पूर्ति वनस्पति तेलों से की जा सकती है। गाय का दूध महँगा होने पर भी बच्चे की आई.क्यू. में वृद्धि से वह खर्च वसूल हो सकता है। इसी प्रकार गाय के गोबर और गोमूत्र से अनेक उपचार हो सकते हैं जो भैंस के मूत्र और गोबर से नहीं हो सकते हैं। कुछ किसानों ने प्रयोग किए हैं कि गोबर एवं गोमूत्र का छिड़काव कीटनाशक का कार्य करता है। गाय के इन लाभों का आकलन करके समाज को समझने से गाय के प्रति आकर्षण बढ़ेगा। कत्लखाने से छुड़ाई गई गाय सड़क पर घूमकर लावारिस नहीं मरेगी।

भैंस के पक्ष में दूसरा पहलू माँस का है। बैल में माँस अधिक तथा शक्ति अधिक होती है। भैंस में माँस अधिक तथा शक्ति कम होती है। यदि ऊर्जा के दूसरे स्रोत सस्ते होंगे और माँस महँगा होगा तो किसान भैंस पालेगा। यदि ऊर्जा महँगी होगी और माँस सस्ता तो किसान बैल रखेगा और उसे पैदा करने के लिए गाय पालेगा।

वर्तमान सरकारी नीतियों में ऊर्जा के दूसरे स्रोतों पर भारी सब्सिडी दी जा रही है। पेट्रोल पर टैक्स लगाकर डीजल सस्ता बेचा जाता है। सस्ते डीजल के उपलब्ध होने से कुएँ से पानी निकालने का कार्य डीजल पम्प द्वारा सुलभ हो जाता है। किसानों को बिजली मुफ्त दी जाती है। इससे भी बैल की शक्ति ठुकरा दी जाती है। थ्रेशर को बिजली की मोटर से चलाया जा सकता है। बैल से दँवाई कराना आवश्यक नहीं रह गया है। दूसरी ओर सरकार माँस के निर्यात को प्रोत्साहन दे रही है। निर्यात खोलने से देश में माँस का मूल्य बढ़ा है और तदनुसार भैंस से होने वाला लाभ भी बढ़ा है। इन सरकारी नीतियों का सीधा परिणाम यह है कि किसान के लिए गाय रखना नुकसानप्रद हो गया है। यदि सरकार तेल का आयात करके मुफ्त बिजली देने के स्थान पर भूसे का आयात करके किसानों को मुफ्त भूसा बाँटे तो परिस्थिति पूरी तरह बदल जाएगी। किसानों को सब्सिडी पूर्ववत् मिलेगी परंतु अब उसके लिए गाय पालना लाभप्रद हो जाएगा। उसे बैल की पशुशक्ति की आवश्यकता होगी जो उसे गाय पालने से ही मिल सकेगी। माँस निर्यात बंद करने से भी मांस का दाम गिरेगा और भैंस पालना लाभप्रद नहीं रह पाएगा।

यह ध्यान रखना चाहिए कि पशुशक्ति का एक नकारात्मक पक्ष भी है। सफल कृषि के लिए जुताई, बुआई, सिंचाई, कटाई एवं दँवाई सभी सही समस्य पर होने चाहिए। बैल शक्ति से इन कार्यों को करने में अधिक समय लगता है। इससे किसान को बैल कम पसंद है। एक और पक्ष यह है कि शहरों में जीवन-यापन के अनेकानेक अवसर खुल जाने से गाँव के श्रमिकों के लिए पलायन की संभावनाएं बढ़ गई हैं। बैल से खेती करने में अधिक संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए शहर पर टैक्स लगाने से यह पलायन थमेगा और गाँवों में श्रमिकों की उपलब्धता बढ़ेगी।

आवश्यकता इस बात की है कि इन तमाम आर्थिक नीतियों का गहन अध्ययन किया जाए। गाय के प्रेमियों की यह जिम्मेवारी बनती है कि वे आकलन करें कि डीजल के स्थान पर चारा सब्सिडी का क्या प्रभाव पड़ेगा, मांस निर्यात रोकने से क्या होगा, बैल से खेती करने से समय पर जुताई कैसे होगी, शहर पर टैक्स लगाने से गांव में श्रमिकों की उपलब्धता पर क्या प्रभाव पड़ेगा इत्यादि। तब सरकार और समाज के समक्ष वैकल्पिक नीतियाँ को रखा जा सकता है।

पशु शक्ति से ही जुड़ा हुआ तीसरा पहलू तेल के क्षीण होते प्राकृतिक भंडार पर तथा तेल के आयात पर हमारी बढ़ती निर्भरता का है। पृथ्वी के तेल भंडार सीमित हैं। हमारी तेल आयात करने की क्षमता भी सीमित है। वर्तमान में तेल आधारित कृषि लाभप्रद हो सकती है परंतु दीर्घकाल में यह नहीं टिकेगी। इस विषय पर दूसरा पक्ष यह है कि मनुष्य की सृजन क्षमता को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है। वायु एवं परमाणु ऊर्जा जैसे अनेक स्रोतों को बाँधकर तेल के संकट से निदान भी संभव है। हमें इतने लम्बे दीर्घकाल का नहीं सोचना चाहिए कि हम वहाँ तक पहुँच भी न सकें। यदि हमने आज महँगे पशु को अपनाकर अपने कृषक को मार डाला तो हम उस मुकाम तक पहुँचेंगे ही नहीं जब तेल समाप्ति की समस्या आएगी। इन तमाम प्रश्नों का संतुलित अध्ययन आवश्यक है।

बहरहाल समस्या यह है कि वर्तमान में किसान को गाय पालना घाटे का सौदा लगता है। इसका एक पक्ष यह है कि गाय के दूध एवं मूत्र आदि से होने वाले लाभ से वह अनभिज्ञ है। दूसरा पक्ष यह है कि आर्थिक नीतियाँ ऐसी हैं कि उन्होंने गाय के सामने भैंस को लाभकारी बना दिया है। ऐसे में गाय वध को गैरकानूनी घोषित करने की मांग टिकती नहीं। इस मांग का मतलब यह जाता है कि किसान नुकसान बर्दाश्त करे। चलने वाला नहीं है। कानून वहाँ बनाया जाता है जहाँ व्यक्ति जनहित के विरुद्ध आचरण करता है। चोर को चोरी करने से इसी कानून द्वारा रोका जाता है क्योंकि व्यक्तिगत हित को साधने के लिए जन की हानि करता है। गाय की समस्या बिल विपरीत है। यहाँ जनहित का सवाल ही उठता है। किसान स्वयं ही कह रहा है उसे गाय नहीं चाहिए क्योंकि उससे उसे होता है। कानून के माध्यम से उसे बर्दाश्त करने के लिए मजबूर नहीं किया सकता है। इसलिए इन महानुभावों को अ शक्ति गाय से होने वाले लाभों का आक करके समाज के समक्ष प्रस्तुत करने लगानी चाहिए। जब किसान के लिए लाभप्रद हो जाएगी तो वह उसे न तो लावा छोड़ेगा न ही उसे कसाई के हाथ बेचेगा। कटता स्वयं बंद हो जाएगी।

एक संभावना यह भी है कि इन प्रयासों के बाद भी गाय का लाभकारी न हो। ऐसी स्थिति में गहन चिंतन आवश्यक होगा। हमें यह समझना होगा कि गाय को क्यों कहा गया। क्या वे गुण समाप्त हो है? अथवा तकनीकि बदलाव ने अप्रासंगिक बना दिया है। हमारी संस्कृति अर्थ-विरोधी नहीं है। अतः यह खोजना कि गाय को माता क्यों कहा गया। शास्त्रीय उद्धरणों से काम नहीं चलेगा। किसान अपना पेट पहले पालेगा फिर बाद में शास्त्र की सुनेगा। जब तक धर्म और अर्थ में समन्वय नहीं होगा तब तक गाय नहीं बचेगी।

Scanned with OKEN Scanner

स्वदेशी अर्थ चिंतन का प्राचीन आधार

■ अतुल रावत

सन् १६०० ई० में चार्टर मिलने से लेकर सन् १७५७ में बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी मिलने तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत से उसी तरह व्यापार करती थी जो शताब्दियों से भारत और पश्चिम के बीच होता आ रहा था। इन्हीं वर्षों तक नहीं अपितु उसके बाद तक भी जिस भारतीय अर्थरचना से अंग्रेजों का सामना हो रहा था वह इतिहास में बहुत लम्बे काल से भारतीय समाज को भौतिक रूप से स्वावलंबन के आधार पर टिकाए हुए थी।

प्लासी की लड़ाई के बाद कंपनी के हाथ में भारत के एक बड़े भूखण्ड की राजनीतिक सत्ता आ गई जिसका प्रयोग उन्होंने इस पारंपरिक भारतीय अर्थरचना को छिन्न-भिन्न करके अपने लिए विपुल लाभार्जन प्राप्त करने के उद्देश्य से एक नई शोषण आधारित अर्थव्यवस्था लागू करने के लिए किया। शताब्दियों से चली आ रही अर्थव्यवस्था को तोड़ने से अंग्रेजों को लगभग एक शताब्दी लग गई और इतिहासकारों का ऐसा मानना है कि १८५० के दशक में आई रेल का पारंपरिक भारतीय अर्थरचना के आधार अर्थात् स्वावलंबी ग्राम को विच्छिन्न करके ग्राम को नगर का मुखापेक्षी, नगर को महानगर का और सारे देश को ब्रिटेन का मुखापेक्षी बनाने में बड़ा योगदान रहा। सन् १९४७ में जब अंग्रेज भारत छोड़कर गए तो यह आकलन करना कि १७५७ से १९४७ तक के १९० वर्षों में जबकि भारत के किसी न किसी हिस्से पर उनका राजनीतिक वर्चस्व बना हुआ था, वे कितनी अकूत सम्पत्ति यहाँ से हरण कर ले गए आसान होगा। किन्तु दूसरी ओर उससे कहीं अधिक क्षति जो उन्होंने भारत को पहुँचाई उसका आकलन करना अत्यंत कठिन कार्य है। उन्होंने इन १९० वर्षों में सनातन काल से चली आ रही भारतीय अर्थरचना को छिन्न-भिन्न कर दिया जो वैदिक काल से अनवरत चली आ रही थी। मुस्लिम लुटेरों से लेकर आक्रमणकारी मुस्लिम सुल्तानों और मुगलों आदि ने भी इस स्वदेशी अर्थरचना को बदला नहीं था। हजारों वर्षों तक भारत को आर्थिक सफलता की कुञ्जी दिए रखने वाली यह सफल अर्थरचना एक विशद् आर्थिक चिंतन पर आधारित थी। इस स्वदेशी अर्थचिंतन ने हजारों वर्षों तक भारत को प्लिनी के शब्दों में कहें तो स्वर्ण के लिए बना एक अंधकूप बना रखा था जिसमें सारे विश्व में सोना इकट्ठा होता जाता था और स्वर्ण ही क्यों, चाँदी का भी विशाल भंडार इस देश में था और आज भी है जबकि भारत में चाँदी की खानें नहीं हैं। इतिहास में भी अधिकतर चाँदी बाहर से ही आई। उदाहरण तो और भी अनेकों दिए जा सकते हैं किंतु मुख्य बात यह है कि यह एक अत्यंत सफल अर्थरचना थी जिसमें स्वावलंबी ग्राम एक प्रमुख इकाई तथा उत्पादन का केंद्र था। सम्पत्ति का उतना संकेंद्रण भी नहीं था जैसा परवर्ती अर्थव्यवस्था ने पैदा किया। बेरोजगारी भी उतनी नहीं थी और नगरों की ओर रोजगार के लिए पलायन भी नहीं था। जितनी अपेक्षाओं के लिए ग्राम नगर की ओर देखते थे उससे अधिक के लिए नगर ग्रामों पर आधारित थे। इसमें व्यापार भी था और विदेश व्यापार भी। और ये समुन्नत श्रेणी के व्यापार थे जो उस काल में विश्वभर में जाना जाता था। बड़े आधार और छोटे शिखर के कारण यह बहुत स्थायित्व वाला ढाँचा था।

प्लासी की लड़ाई के बाद कंपनी के हाथ में भारत के एक बड़े भूखण्ड की राजनीतिक सत्ता आ गई जिसका प्रयोग उन्होंने इस पारंपरिक भारतीय अर्थरचना को छिन्न-भिन्न करके अपने लिए विपुल लाभार्जन प्राप्त करने के उद्देश्य से एक नई शोषण आधारित अर्थव्यवस्था लागू करने के लिए किया।

जिस चिंतन के आधार पर यह रचना आरंभ हुई और इतने लंबे काल तक विकसित पलवित होते हुए चलती रही उसके बीज हमें वेदों से ही मिलने आरंभ हो जाते हैं। परवर्ती काल में उपनिषदों में, स्मृतियों में विशेषत: *मनु स्मृति* और *याज्ञवल्क्य स्मृति* में, *शुक्र नीति* में, *महाभारत* के शांति पर्व में, उसके उद्योग पर्व में *विदुर नीति* के रूप में, दक्षिण में तिरुवल्लूर की पुस्तक *तिरुक्कुरल* में, और कौटिल्य या चाणक्य के *अर्थशास्त्र* में इस चिंतन को हम पुष्पित और पल्लवित होता पाते हैं। इन मुख्य स्रोतों के अलावा भी

Scanned with OKEN Scanner

अन्य बहुत से ग्रंथों में अर्थचिंतन मिलता है। इनमें से कई ग्रंथों में तो जटिल समाज रचना के परिप्रेक्ष्य में अर्थचिंतन के उन नियमों सिद्धांतों और कारकों का विशद् विवेचन है जो योरूप में औद्योगिक क्रांति के बाद तक भी नहीं पाए जाते।

स्वदेशी अर्थचिंतन के केंद्र में पुरुषार्थचतुष्टय का मूल सिद्धांत निहित है। इसमें अर्थ को धर्म के द्वारा मर्यादित माना गया है जोकि धर्म अर्थ काम और मोक्ष के क्रम से ही सिद्ध है। शब्दों के अनुवाद की समस्या ने स्वदेशी चिंतन को उन लोगों के लिए समझना कठिन कर दिया है जो मूलत: अंग्रेजी में सोचते हैं या जिनका विचार वितान पश्चिमी है और जिसे भेदकर बाहर देखने की क्षमता उनके लिए समस्या है। इसीकारण जहाँ धर्म मात्र रिलीजन रह जाता है वहीं अर्थ मात्र इकॉनोमिक्स रह जाता है। उसी प्रकार काम भी केवल सेक्स तक सीमित कर दिया गया है। वास्तव में अपनी विशेष परिधिमर्यादित सोच के चलते पश्चिमी मानस (फिर चाहे वह भारतीय तन में ही क्यों न हो) इन शब्दों को इनके वृहत् रूप में नहीं ले पाता। अन्य शब्दों की चर्चा यदि यहाँ प्रासंगिक न भी मानी जाए तो भी अर्थ के विषय में यह समझ लेना आवश्यक होगा कि भारतीय मानस ने अर्थ के मायने अधिक विशद् संदर्भों में लिए हैं। उसमें राजनीति का भी समावेश है किंतु वह मात्र पॉलिटिकल इकॉनोमी नहीं उसमें समाज रचना का भी समावेश है किंतु पुन: वह मात्र सोशल इकॉनोमी नहीं। उसके अन्य पक्षों में श्रम, उत्पादन, श्रेणियाँ, गिल्ड आदि सभी कुछ आता है। वह अर्थ चिंतन व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व तक व्याप्त है। इसमें क्योंकि सर्वहित की बात कही गई है यथा सर्वे भवन्तु सुखिना: सर्वे सन्तु निरामया: अत: इस पर आधारित अर्थरचना अधिकाधिक समतामूलक बनी। वास्तव में अर्थ का अधिक निकट का अंग्रेजी का शब्द इकॉनोमिक्स की अपेक्षा मैटीरियल (जिसे भौतिक अनुवाद किया जाता है) हो सकता है। यह समग्रतामूलक भारतीय सोच के विपरीत खण्डित पश्चिमी सोच का परिणाम अधिक प्रतीत होता है कि इकॉनोमी या इकॉनोमिक्स जो अर्थ एक प्रमुख आयात होते हुए भी इस शब्द के संपूर्ण मायने में ही रूढ़ हो गया है। इसीलिए आधुनिक योरूप में जब इकॉनोमिक्स की नींव रखी जा रही थी तब ज्ञान की इस नवीन विधा को मानने वाले ज्ञानीजन अर्थचिंतन की प्राचीन परंपरा के दर्शन नहीं कर पाए। उसके मूल में भारत के प्रति दुराग्रह भी थे किंतु एक कारक कारक यह भी है कि बौद्धिक रूप से ईमानदार होते हुए भी बहुत से विद्वान अर्थचिंतन के क्यों विशद् स्वरूप को नहीं देख पाए। इसीलिए जब पहली बार भारतीय इतिहास में से अर्थचिंतन के बिंदु निकालकर विश्व के समक्ष रखे गए तो उन पर प्रतिक्रियास्वरूप विश्वास नहीं किया गया। किंतु धीरे-धीरे शोध के माध्यम से विश्वसनीयता का आधार बढ़ता जा रहा है। इसका एक रोचक उदाहरण आचार्य एम.जी. बोकारे द्वारा आचार्य जे.के. गालब्रेथ के ध्यान में यह बिन्दु लाया गया तो उस महान अर्थशास्त्री का मत था कि आधुनिक पश्चिमी अर्थशास्त्रियों को भी अर्थचिंतन की प्राचीन भारतीय परंपरा से अवगत कराया जाना चाहिए।

किंतु दूसरी ओर भारतीय अर्थशास्त्रियों में वामपंथियों विचारों से जुड़े लोग आज भी प्राचीन भारत के अर्थचिंतन की विशाल परंपरा को नकारते हैं। वे अधिक से अधिक कौटिल्य के *अर्थशास्त्र* में उस चिंतन के कुछ रूप मानने को कठिनाई से सहमत हो पाते हैं। वे अर्थचिंतन को उस समग्र रूप में नहीं देखते, जैसा कि प्राचीन भारतीय विद्वानों ने देखा है। स्वयं चाणक्य ने शुक्राचार्य, बृहस्पति तथा अन्य कई अर्थचिंतकों को अपने *अर्थशास्त्र* में जिक्र ही नहीं किया अपितु भारतीय परंपरा के अनुसार अपनी पुस्तक के आरंभ में ही इन विद्वानों के प्रति अनुग्रह भी व्यक्त किया है। कौटिल्य ने यह भी लिखा है कि अपने ग्रंथ में उन्होंने उस समय उपलब्ध सभी अर्थशास्त्रों से विचारों को संकलित भी किया है। अपने पूर्ववर्ती अर्थचिंतकों का कौटिल्य ने सौ से अधिक बार जिक्र किया है। रोचक तथ्य यह है कि इनमें से अधिकतर बार यह जिक्र इस संदर्भ में आया है कि कौटिल्य अपने किसी पूर्ववर्ती विद्वान की राय से मतैक्य या मतभि[...] दर्शा रहे हैं। इस उच्च कोटि की बौद्[...] बहस का पुस्तकों के आरंभ में पाया ज[...] पश्चिम के लिए खासी नई बात है वि[...] भारतीय परंपरा में परस्पर विरोधी वि[...] के लिए सम्मान एक सनातन सत्य [...] कौटिल्य को अपनी बौद्धिक स्थापना [...] विचार रखने या सिद्ध करने के [...] विरोधी विचारों को दबाने या छिपाने [...] आवश्यकता नहीं थी जबकि बहुत [...] आधुनिक विद्वान भी इस गुण को अप[...] नहीं देख पाएंगे। इससे स्पष्ट ही है [...] कौटिल्य से बहुत पहले ही अर्थचिंत[...] एक स्पष्ट और बौद्धिक दृष्टि से [...] सक्षम धारा न केवल विकसित हो [...] थी अपितु ज्ञान के क्षेत्र में उसका [...] स्थापित था।

कौटिल्य से पहले जहाँ शु[...] और आचार्य बृहस्पति आदि के विच[...] परंपरा में महत्वपूर्ण स्थान रखते है[...] कौटिल्य के बाद भी यह परंपरा [...] चलती रही। उनके बाद बौद्ध अर्थ[...] की भी एक लम्बी परंपरा मिलती है[...]

अंग्रेजों के भारत से चले ज[...] उपरांत जहाँ होना तो यह चाहिए [...] स्वदेशी अर्थचिंतन की आधुनिक परं[...] आधार पर (जिसे गांधीजी ने [...] पल्लवित किया था) देश की अ[...] की जाती। उस चिंतन की जड़े इस[...] की परंपरा में बहुत गहरे समाई है। [...] अंग्रेजों ने इस चिंतन परंपरा का [...] काट दिया था किंतु उसकी जड़ें ब[...] गईं। गांधीजी ने उन्हीं जड़ों से स्वा[...] का आंदोलन खड़ा कर दिया। [...] स्वातंत्र्योत्तरकालीन भारत में बजाए [...] अर्थचिंतन के विदेशी अर्थचिंतन को [...] बनाकर अर्थव्यवस्था की रचना की [...] परिणाम सबके सामने हैं।

अर्थचिंतन के क्षेत्र में इसीलिए [...] आवश्यकता इस बात की है कि आ[...] स्वदेशी चिंतनधारा के प्राचीन भारतीय [...] खोजे जाएं। इनसे आधुनिक स्वदेशी [...] धारा को सुदृढ़ किया जाए और तब [...] पर अवलम्बित अर्थरचना का निर्माण [...] जाए।

Scanned with OKEN Scanner

संस्कृति की सही समझ देता है शास्त्रीय संगीत

■ डॉ. प्रमोदकुमार दुबे

लोकगीतों के धुनों के शास्त्रीय संस्कार देकर अनेक राग बनाए गए हैं। भटियारी, पूरबी, जौनपुरी, मुलतानी, सोरठ इत्यादि अनेक राग बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, पंजाब, सौराष्ट्र के अंचलों में गए जाने वाले लोकगीतों की धुनों से निर्मित हुए हैं।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के निर्माण में घटित होने वाली स्वर-संस्कार की प्रक्रिया ही कुछ ऐसी है जिससे लोक और शास्त्र का, शाश्वत और समकालीन का भेद-परक द्वंद्व उत्पन्न करने वाले कम्युनिस्ट कला-विचारों की चाहर दीवारियाँ ध्वस्त होती है। ऐसा नहीं है कि यह प्रक्रिया सिर्फ शास्त्रीय संगीत के निर्माण तक सीमित है यह संस्कृत भाषा के निर्माण, साहित्य-सृजन, भारतीय नृत्य-कला, लोक व्यवस्था और राष्ट्र के एकात्मस्वरूप की समझ देने में भी सक्षम है। चूँकि इस संस्कार-प्रक्रिया की निर्विवाद उपस्थिति शास्त्रीय संगीत में बाहरी दबावों से मुक्त है, तर्कसंगत और स्पष्ट है, इसे शास्त्रीय संगीत के माध्यम से समझने में अधिक सुविधा मिल सकती है।

संस्कार-प्रक्रिया को संस्कृति का सक्रिय अंग कहा जा सकता है। संस्कृति के भीतर इसके निरंतर गतिशील होने के कारण इसे संस्कृति-प्रक्रिया कहना अनुचित नहीं होगा। संस्कृति-प्रक्रिया के बोध से यह स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृति किसी जाति, क्षेत्र और समय की सीमा में उपजने के बाद भी एक सर्वग्राही चेतन अस्तित्व है। इसकी चिर जीवंतता हेतु भारतीय मनीषा ने सुनिश्चित प्रक्रिया निर्धारित की है। इसके मूल और शाखाओं का विस्तार बीज की पहचान के साथ किया गया है। इसके विस्तार का भी एक सुनिश्चित धरातल है और मूल का भी सुनिश्चित स्थान। इन दोनों के महत्व को समझ गया है। इसलिए भारत में अविकृत स्थिति में कला-परंपरा जीवित हैं।

हुआ यह कि हमारी कला-संस्कृति के संदर्भ में बाहरी लोगों ने उस समय भ्रामक विचार देना आरंभ किया, जब पराधीनता और शोषण से जर्जर होकर हमारी बौद्धिक संस्थाएं अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष कर रही थी। उनके राष्ट्रव्यापी प्रतिनिधित्व टूट-बिखर रहे थे। और क्षेत्रश: सुरक्षा के प्रयास होने लगे थे। उनकी विस्तृत भूमिकाएँ वैश्विक प्रतिनिधित्व से वंचित हो राष्ट्र तक और राष्ट्र से भी सिमटती हुई क्षेत्रों में संकुचित होने लगी थी। राज्य व्यवस्था के टूट-बिखर जाने से कला-संस्कृति के विस्तार भी अवरुद्ध हो गए थे। व्यापक सम्वाद की आपसी भूमिका समाप्त हो जाने से पराये लोगों ने हमारी व्याख्या आरंभ की थी। उन्होंने हमारी क्षेत्रीय अस्मिताओं को उत्साहित किया और राष्ट्रीय अस्मिता को तोड़ने का कार्य किया। उन लोगों ने बताया कि भारत की क्षेत्रीय संस्कृतियाँ आपस में बिल्कुल असमान है, इनमें भारी अंतर है, इनका कोई आपसी संबंध नहीं है। क्षेत्रीय संस्कृतियों के आपसी अंतर को अधिक से अधिक उभारा गया और उनके एकात्मस्वरूप को तोड़ने का प्रयास किया गया।

राष्ट्र के एकात्मस्वरूप का प्रतिनिधित्व करने वाली भाषा संस्कृत थी। इसमें सभी क्षेत्रों के प्राकृत शब्दों को एक विशेष प्रक्रिया से संस्कारित कर संस्कृत बनाया गया था और व्याकरण की एक व्यवस्था भी विकसित हुई। लोक प्रचलित शब्दों के विधिवत परिमार्जन से संस्कृत के शब्द निर्मित हुए – जैसे खान से निकले हीरा को तराशकर शोभायमान बनाया जाता है। इसी प्रकार लोक प्रचलित संगीत-स्वरों को भी शास्त्रीयता प्रदान की गई।

अंग्रेजों के बाद कला साहित्य-संस्कृति संबंधी व्याख्या स्वतंत्र भारत के संसाधनों और अन्य विदेशी सहयोग पाकर कम्युनिस्टों ने भी आरंभ की। उन्होंने क्षेत्रीय अवयवों और शास्त्रीय अवयवों में आपसी टकराव की मनमानी व्याख्याएँ खड़ी की। शास्त्रीय कला को आभिजात्य और क्षेत्रीय कला को लोक या जन संस्कृति माना। मुगल काल में शास्त्रीय संगीत के दरबारी रूप और इसके पूर्व की व्यवस्था में मंदिरों से उसकी सम्बद्धता के कारण उन्हें शास्त्रीय कलाओं को आभिजात्य घोषित करने में असंगत तर्क गढ़ने की सुविधा मिल गई।

कम्युनिस्टों के इस द्वंद्ववाद में एक प्रवृत्ति और उभर कर सामने आई। इस प्रवृत्ति को ३० सितंबर १९९१ के 'धर्मयुग' में प्रकाशित मकबुल फिदा हुसैन नामक चित्रकार के एक साक्षात्कार की इन पंक्तियों में देखा जा सकता है – "मेरे ख्याल से वो (पिकासो) ही शख्स है, जिसने आर्ट को लिबरेट किया, तमाम एनीमेशन तोड़ दिए। सबसे बड़ी चीज है पूर्ण स्वतंत्रता, जो आनी चाहिए। इसके खिलाफ आप देखते हैं, हम सब खिलाफ हैं। हमारे यहाँ के नृत्य देखिए, भरत नाट्यम्, यह जो शास्त्रीय नृत्य है – वो अच्छा है, लेकिन क्या ५००० साल तक वहीं करते रहेंगे? ऐसे ही संगीत है। संगीत में बड़े-बड़े घराने हैं, अभी तक पुरानी चीज लेकर बैठे हैं।" मकबुल फिदा हुसैन ने अपनी इस विघटनकारी प्रवृत्ति का निर्वाह पूज्य देवी-देवताओं की आकृतियों को तोड़-फोड़ करने में किया। इसके बावजूद कि उन्हें इन पूज्य आकृतियों के शास्त्रीय आधार की कुछ

Scanned with OKEN Scanner

भी जानकारी नहीं है। यदि इसे आक्रांता-प्रवृत्ति मान लिया जाए – मूर्ति तोड़ने का एक नया प्रयास, तो भी इस मूर्खता पर यही कहना उचित होगा कि हे ईश्वर! आप इन्हें सद्बुद्धि दें, ये लोग नहीं जानते कि कर क्या रहें हैं। वास्तव में मूर्ति तोड़ने या मूर्ति पूजा का खंडन करने का भारी श्रम जिन निराकार-एकेश्वरवादी लोगों ने देश के बाहर से आकर अथवा देश में उत्पन्न होकर किया – उन्हें इस कला-भाषा को पढ़ने की बुद्धि होती तो शायद वे लोग इस काम में अपने कठोर श्रमदान का अपव्यय समझ पाते और कोई दूसरा सार्थक कार्य करते। उन्होंने इस काम से अपनी जड़बुद्धि का परिचय नहीं दिया होता। और यदि यही काम हुसैन भी करने में अपना समय गँवाए तो उन्हें जड़बुद्धि से मुक्ति का मार्ग सुझाना उचित है।

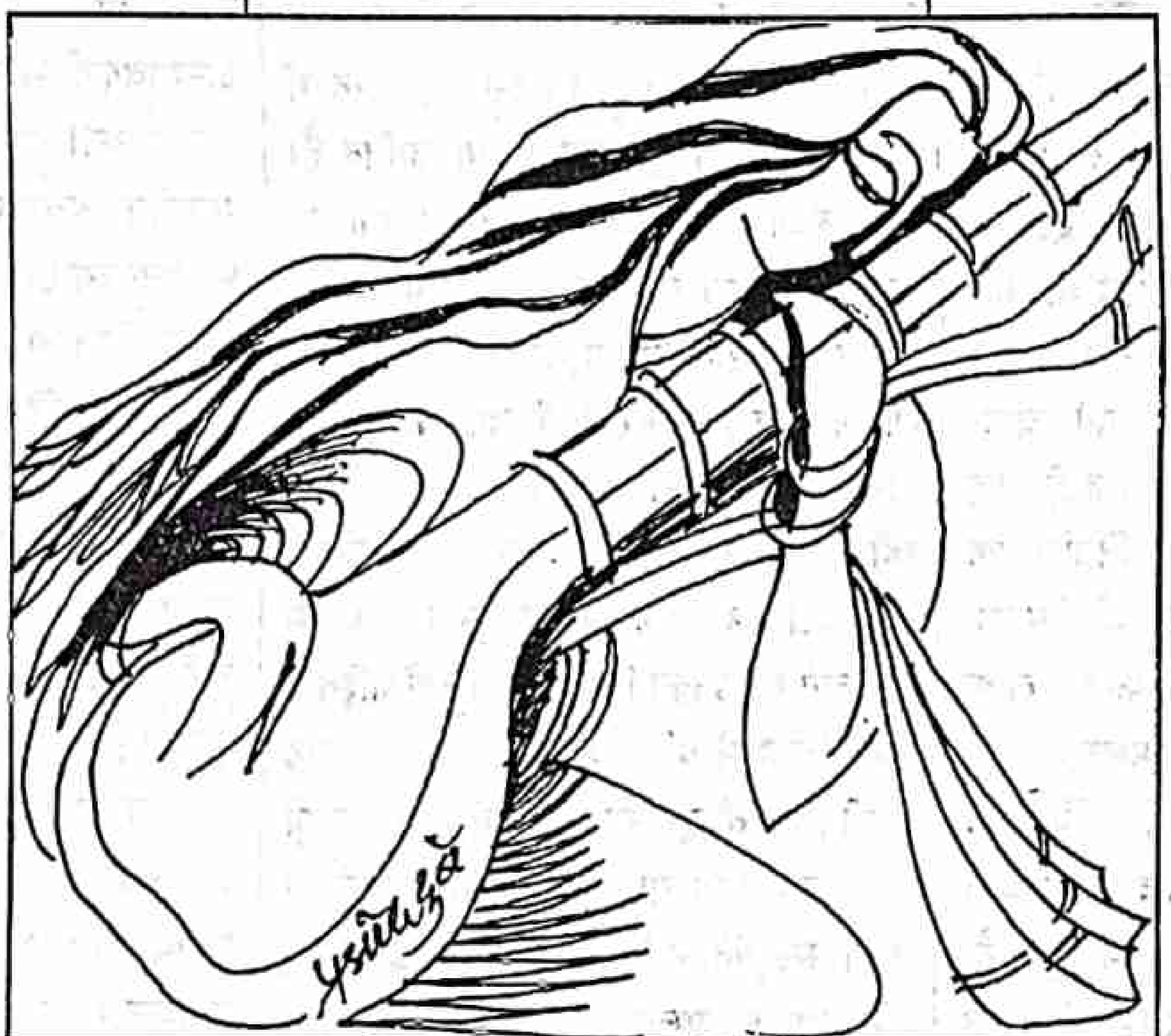

पहले तो यह जानना जरूरी है कि पाश्चात्य क्लासिक आर्ट और भारतीय शास्त्रीय कला एक समान नहीं है। क्लासिक और शास्त्रीय में गहरा अंतर है। क्लासिक कला का स्थूल आकार सुनिश्चित है। परंतु शास्त्रीय कला की आत्म-सत्ता (सूक्ष्म संवेदना) सुनिश्चित है। भारत की शास्त्रीय कला में क्षेत्रीय पहचान उसके बाहरी आकार का प्रतिनिधित्व करती है। पर उसका उपास्य नाद ब्रह्म केवल एक है। एक ही अविभाज्य सामवेद सर्वत्र व्याप्त है। इसीमें सभी पिरोये हुए हैं। यह निर्वचनीय है। इसका अनुभव ही साक्ष्य है। इसे शब्दों से धर-पकड़ करना उचित नहीं। यह अनुभव कभी पुराना नहीं पड़ता। जो लोग इसे नहीं चाहते, कुछ नया करके अपना किला बनाने और इतिहास गढ़ने का प्रयास करते हैं अथवा अपनी दुकान खड़ी करते हैं उन्हें यह शाश्वत सत्ता अपने पदाघात से धूल में मिला देती है।

भारतीय शास्त्रीय नृत्य-संगीत और कला से अनभिज्ञ हुसैन जैसे लोग उन्हें पुराना कह उखाड़ फेंकने की बात करते हैं। यह एक ओछी चालाकी है। सुप्रसिद्ध चित्रकार पिकासो के सामने यह समस्या थी कि ग्रीक आर्ट को चरम पर पहुँचाने वाले माईकल एंजलो के बाद आगे उस कला में किसी प्रतिभा के लिए कुछ करना संभव नहीं था। इसलिए पिकासो ने विघटन की प्रक्रिया प्रारंभ की थी। भारत में यह काम इसलिए होना चाहिए कि पिकासो ने किया – हुसैन के इस तर्क का कोई तुक नहीं बैठता। भारत में गणेश प्रतिमा के कितने रूप हैं? यहाँ तक कि इनकी मिट्टी और गोबर की अनगढ़ आकृतियाँ भी पूजित होती हैं। किसी एक सुनिश्चित आकृति कला की दृष्टि से कभी निर्धारित नहीं हुई। पूज्य रूपों की शास्त्रीय अवधारणा अवश्य सुनिश्चित हुआ है। जहाँ पहुँचने की क्षमता बाजार लगाने वाले इन ओछे लोगों के वश की नहीं है।

ज्ञात रहे कि हमारी शास्त्रीय कला की बाह्य विधाओं में निरंतर सृजन होता रहा है। इसमें योगदान का मार्ग प्रत्येक युग के लिए खुला हुआ है। इसलिए यह परंपरा है न कि रूढ़ि, जिसे तोड़ जाना जरूरी हो। संगीत के क्षेत्र में जिन बंदिशों को पारंपरिक या पुराना कहा जा सकता है, उनकी रचना भी किसी काल खण्ड में नई रही है और वह किसी अगले कालखण्ड में पुरानी हुई है। वर्तमान शास्त्री संगीत की विकास-यात्रा भी कभी रुकी नहीं। सामवेदीय संगीत से आगे चलकर यह गंधर्व संगीत में परिवर्तित हुई। भरत मुनि के काल में इसी परिवर्तन के कारण संगीत को गंधर्व नाम दिया गया। छठी सदी के संगीताचार्य मतंग ने मार्गी संगीत और देशी संगीत का अंतर बताते हुए लिखा है कि 'श्रुति-स्वर-ग्राम आलाप-मुर्छनादि नियमों से गाया जाने वाला संगीत मार्गी है और इन नियमों से रहित संगीत देशी कहा जाता है।' भरत मुनि-कालीन संगीत जातियों का रूपांतर देशी रागों में होने लगा था। इन दिनों भी संगीत के गायन में प्रयोग हो रहे थे। मतंग काल में संगीत संक्रमण के दौर से गुजर रहा था। आगे चलकर संगीत के निर्माण का एक सुव्यवस्थित व्याकरण विकसित हुआ। इसी प्रकार मध्यकाल में शास्त्रीय संगीत पर युगीन प्रभाव का असर पड़ा। संगीत दरबारी रंग में रंगा। भक्ति के पदों के बदले ध्रुपद जैसी गंभीर गायन शैली में भी नई बंदिशें आईं, जो श्रोता-स्वामियों के मनोनुकूल बैठती थी। गुणी-गवइये भी अपने को संगीत की तलवार लेकर जहाँ-तहाँ घूमते फिरने वाला लड़ाकू कहने में संकोच नहीं किया। समकालीन प्रभाव से निर्मित एक ध्रुपद का बोल है – 'तान तलवार लिए फिरे गुणीजन जहाँ-तहाँ।'

शास्त्रीय संगीत में दो धाराएँ आरंभ से ही दिखाई पड़ती है। एक संगीत धारा युगीन प्रभाव की ओर तीव्र गति से भागती है, और समय के अनुसार ढलकर पुरस्कार-पद-प्रतिष्ठा आदि प्राप्त कर उससे उपजने वाले सुख-साधनों का भोग करती है। दूसरी संगीत धारा शाश्वत काल की अभिव्यक्ति बनती है, संगीत को साधना का विषय मानकर तपती है और सत्य का साक्षात्कार करती है। यह हरिदासी संगीत धारा है। संसार-प्रवृत संगीत धारा कभी दरबारी हुई आज बाजारी है।

दरबारी या बाजारी धारा जब गंदला जाती है उसे स्वच्छता के रास्ते पर ले जाने का काम हरिदासी धारा करती है। मध्यकाल के अंतिम चरणों में संगीत सामाजिक अप्रतिष्ठा का शिकार हुआ। यह दरबार से वेश्याओं के कोठों पर भी गया। परिणाम यह हुआ कि समाज में इसके प्रति घृणा फैली।

यह समकालीन प्रभाव था। लेकिन जिन दिनों इतिहास का चक्र दुनिया के नक्शे से साम्राज्यों को जड़ें नोंच कर फेंकने लगा था और नए जनतांत्रिक युग का उदय हो रहा था। इन्हीं दिनों भारतीय शास्त्रीय संगीत के उद्धार में बड़े-बड़े आचार्यों ने अपना सहयोग दिया। आज संगीत के गतिशील इतिहास का नया दौर न मंदिर का है न किसी दरबार का। वह जनरुचि से अवश्य जुड़ा है। इसने अपने स्वतंत्र विकास का दायित्व भी अपने कंधे पर उठा लिया है। इस पर बाजार का तेज प्रभाव पड़ने लगा है। स्रोता के पास समयाभाव के कारण संगीत सुनने का पर्याप्त अवकाश नहीं है। वह जल्दी में हर तत्व की प्राप्ति चाहता है। इसलिए संगीतज्ञ भी जोड़-झाला इत्यादि को संगीत के सूक्ष्म अलंकारण से अधिक परोसने पर ध्यान देने लगे हैं। चमत्कार को नमस्कार अधिक मिल रहा है गहराई घटती जा रही है। रस सूखता जा रहा है। आज बाजार से रक्षा के लिए साधु और शाश्वत धर्म क्षेत्र में संगीत का कल्पवास आवश्यक है।

नए दौर के समकालीन मुहावरों से शास्त्रीय संगीत अछूता कैसे रह सकता है। सुविख्यात गायक स्व० कुमार गंधर्व के अंतरंग रहने वाले संगीत शास्त्री श्री वामन राव देशपाण्डे लिखते हैं – 'कुमार जी के तानों की तेजी और आज के जीवन की गति इन दोनों का क्या संबंध है? समाज-जीवन के आपाधापी-उलझनों के प्रतिविम्ब से युगीन रचना अछूती नहीं रह सकती। उनके गायन पर महायुद्धोत्तर जीवन का तनाव और पेंच का प्रभाव है।'

भारतीय शास्त्रीय संगीत की यह विलक्षणता है कि एक राग जितनी बार प्रस्तुत होता है – उतनी बार नयापन उभारता है, इसका आकर्षण कभी नहीं चूकता। इसकी समकालीन गुणवता सालों के फासलों में ही नहीं बदलती, यह समय के छोटे-हिस्से में भी घटित होती है। इसके बावजूद इसमें ऐसा भी तत्व है जो कभी नहीं बदलता। वह समय की गति को लाँघ जाता है। शाश्वतता और समकालीनता की यही संधि भारतीय कला विधाओं की निजी पहचान है। पाश्चात्य संगीत में यह गुणवत्ता नहीं होती। उसमें संगीतकार द्वारा निर्मित स्वर-रचना बस एक ही रंग-ढंग में बनी रहती है। उन्हें एक बार सुनने के बाद दुबारा सुनना बासी खाने की तरह होता है। भारतीय संगीत की हार्मोनी पाश्चात्य संगीत के लिए ऐसी चुनौती है जिससे प्रभावित होने के बावजूद वह अस्तित्व भय के कारण उसे अपना नहीं सकता।

पूर्व कृतियों की गहन परख, अपनी शैली की प्राप्ति और तब रचना का दायित्व निर्वाह – ये तीन अवस्थाएं संस्कृत-चित्त के निर्माण के लिए आवश्यक होती है। कला विधा के माध्यम से सृष्टि-सम को अनुभूते बिना सृजन का दायित्व बेमानी है। शास्त्र की सच्चाई अथवा इसके निर्माण की प्रक्रिया जानने के लिए तप आवश्यक है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत का आधार तत्व लोकगीतों में निहित है। लोकगीतों के धुनों के शास्त्रीय संस्कार देकर अनेक राग बनाए गए हैं। भटियारी, पूरबी, जौनपुरी, मुलतानी, सोरठ इत्यादि अनेक राग बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, पंजाब, सौराष्ट्र के अंचलों में गए जाने वाले लोकगीतों की धुनों से निर्मित हुए हैं। इतना ही नहीं प्रकृति में व्याप्त स्वरों से भी रागों की निर्मितयाँ हुई हैं। कई समर्थ गायकों ने आंचलिक गीतों को शास्त्रीयता में ढालकर विशिष्ट गायकी द्वारा ख्याति अर्जित की। लगन गंधार ने मालवा क्षेत्र के मालवती के गायन से, अलाजिलाबाई ने राजस्थान के मांड के गायन से गिरिजा देवी ने चैती और कजरी के गायन से ख्याति पायी। स्वयं कुमार गंधर्व ने देवास और मालवा के अनेक लोकधुनों को नए रागों में परिवर्द्धित किया। कहते है, कुमार जी के गायन की मौलिकता, प्रभावोत्पादक शक्ति और असाधारण आवेग लोकगीत से प्रेरित विशेषता है। कुमार गंधर्व नए दौर के ऐसे गायक हैं जिन्हें नियति ने संगीत के क्षेत्र में विशेष योगदान का निमित्त बनाया। उनकी असाधारण प्रतिभा अनाभिभूत कला दृष्टि और निरंतर प्रयोगशीलता से शास्त्रीय संगीत की रचना-प्रक्रिया आज अधिक खुलकर सामने आ चुकी है।

कुमार जी के गायन की प्रारंभिक अवस्था में उनके समय के कई घरानों की विशेषताओं का संचयन था। वा॰रा॰ देशपाण्डे के अनुसार श्री कुमार को सुनते हुए मांजी खाँ, फैयाज खाँ, रहमत खाँ की गायकी की विशेषताएँ एक साथ दिखती, ग्वालियर घराने का सौम्य ढंग, जयपुर की गायकी की लय-लास्यवाली तानों और बाँटों की पहेलियाँ बुझाने-सुलझाने वाली रचनाएँ, आगरा गायकी की सम पर आवेगपूर्ण आमद होने की विशेषता उन्होंने अपने गायन शैली में समेट रखी थी। लेकिन कुमार इस गण-संचयन से संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने स्वयं संगीत के साक्षात्कार का संकल्प लिया और एकदिन उन्होंने संगीत की स्वरावलियों के नाद से उस अंतर्नाद को छू लिया, जिसकी छुअन के बाद लौटानी के स्वरों में जादू उतर आता है। संगीत की प्राप्ति के बाद पाँच वर्षो तक कुमार जी बीमार रहे। इन दिनों वह गा नहीं सकते थे, केवल नाद विश्व की विविधा को मौन द्रष्टा बने सुन सकते थे। इन्हीं दिनों उनका अनुभव पका और वह रचना के अधिकारी हुए।

सर्जक को साधना के ताप में तपना पड़ता है। तभी उसे सृजन का अधिकार मिलता है। पूर्व कृतियों की गहन परख, अपनी शैली की प्राप्ति और तब रचना का दायित्व निर्वाह – ये तीन अवस्थाएं संस्कृत-चित्त के निर्माण के लिए आवश्यक होती है। कला विधा के माध्यम से सृष्टि-सम को अनुभूते बिना सृजन का दायित्व बेमानी है। शास्त्र की सच्चाई अथवा इसके निर्माण की प्रक्रिया जानने के लिए तप आवश्यक है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत का गणित से गहरा संबंध है। संगीत वहिर्मुख से अंतर्मुखी गति है, गणित अंतर्मुख से बहिर्मुखी गति है। चेतना के एक छोर पर संगीत है तो दूसरे छोर पर गणित। ये दोनों प्रकृति की क्रमबद्धता के साक्ष्य हैं। प्रकृत-प्रसूत संगीत-स्वर को शास्त्रीय या संस्कृत बनाने की प्रक्रिया में तीन स्थितियाँ होती हैं। पहली, लोक स्वरों का चयन – जिससे वादी और संवादी स्वरों को पाया

Scanned with OKEN Scanner

जा सके। यह विनिवेश की क्रिया है। सामान्यतया लोकधुनों मे राग के पूरे सप्तक नहीं होते। इनमें आधे या चौथाई सप्तक मिलते हैं। इन स्वरों को बड़ी सूझ से पूरा किया जाता है। इस कार्य में उचित स्वरों की परख के लिए वर्ज्यावर्ज्य या अन्यथाकरण की दूसरी स्थिति आती है।

अनुपयुक्त स्वरों की छटनी और उपयुक्त स्वरों के निर्धारण के वाद तीसरी स्थिति आती है अन्वयन की। इस क्रिया में रचनाकार अपने संस्कार पाए हुए चित्त से नवनिर्मित राग को विशेष आकार प्रदान करता है।

लोक गीतों का सीधा संबंध प्रकृत से है। प्रकृति में अपना छंद है, लय है। स्वरों की संस्कार-प्रक्रिया तब तक पूरी नहीं होती जब तक प्रकृति के छंद की अनुभूति से मिली समाहारकारी दृष्टि से राग की प्रकृति और उसे प्रसूत करने वाली प्रकृति के बीच का अंतर्सम्बंध तय नहीं कर लिया जाता।

सुवह होने के पहले गाया जाने वाला गीत उस समय की प्राकृतिक अवस्था से प्रसूत होता है। इस समय की प्रकृति शांत और गंभीर है, गीतों के स्वर भी शांत और गंभीर होते हैं। इन गीतों में भैरव राग के स्वर स्वतः पाए जाते हैं। शास्त्रीयता किसी व्यक्ति परक इच्छा की मनमानी रचना नहीं होती अपितु यह समष्टि की रचना को मात्र संस्कार देने का प्रयास है। यही कारण है कि शास्त्रीय संगीत प्रकृति के कण-कण को प्रभावित करता है इससे मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी-वनस्पतियाँ भी सम्प्रेषित होती हैं। प्रकृति के विपरीतता के द्वंद्व से उत्पन्न मनोविकारों की चिकित्सा में भी शास्त्रीय संगीत के प्रयोग किए जाते हैं और विशेष स्वरों द्वारा प्रकृति में वर्षा वरसा देने, अग्नि उत्पन्न करने की क्रियाएं भी होती हैं। यह कपोल कल्पना नहीं है, प्रत्येक क्रिया की एक विशेष ध्वनि होती है इस ध्वनि से क्रिया की ओर जाने से चमत्कार होता है। जिस प्रकार भौतिक पदार्थों के मौलिक कणों की एलेक्ट्रॉन, प्रोटान न्यूट्रान आदि खोजे हुई और उसके चकित करने वाले परिणाम आज सामने आ रहे हैं, विश्व ब्रह्माण्ड की ध्वनियों की मौलिक इकाई को भी सप्त स्वरों के रूप में खोजा गया। इसके भीतर सभी ध्वनियाँ समाहित हैं। इनसे भी चकित करने वाले परिणाम सामने आते रहे हैं।

वस्तुतः शास्त्रीय संगीत सवाक् प्रत्यक्ष और बोधगम्य योग है। जिससे आवर्तमान प्रकृति के विविध स्वभावों में व्यक्त हो रहे एक ही ब्रह्मनाद की छुअन पायी जा सकती है और एकात्मभाव का अनुभव भी किया जा सकता है। शास्त्रीयता सिर्फ इतने के लिए होती है कि लोक की भिन्नताओं को एकक्रम देकर मूल उत्स तक पहुँचा दे। इस परस्पर संबंध के कारण लोक और शास्त्र एक दूसरे के पूरक है। मीमांसादर्शन का पहला वचन है कि लोक व्यवहार में जिन अर्थों में शब्दों की प्रसिद्धि हो, सूत्र में भी यथा संभव उन शब्दों को लोक प्रसिद्ध अर्थ का वाचक समझना चाहिए। लोक शास्त्र का साक्षी है और शास्त्र लोक का नियंत्रक। शास्त्र के बिना लोक का पतन हो जाता है। शाश्वतकाल के अनुशासन के बिना समकालीनता पतित हो जाती है।

शास्त्रीयता किसी व्यक्ति परक इच्छा की मनमानी रचना नहीं होती अपितु यह समष्टि की रचना को मात्र संस्कार देने का प्रयास है। यही कारण है कि शास्त्रीय संगीत प्रकृति के कण-कण को प्रभावित करता है इससे मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी-वनस्पतियाँ भी सम्प्रेषित होती हैं।

प्राकृत स्वरों को संस्कृत बनाने की प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में भारतीय दर्शन प्रत्यक्ष रूप से चरितार्थ होता देखा जा सकता है। जैसे अनेक नदियाँ सागर में मिलकर एक हो जाती हैं, वैसे ही विविध रुचियों के स्वर समूह भी एक सर्वव्यापी नाद में समत्व पा जाते हैं। इस चिंतन से हमारे राष्ट्र के सम की ओर अग्रसर हुई समग्र सांस्कृतिक चेतना को पहचाना जा सकता है। पूरे देश के 'सम' की पहचान की जा सके इसके लिए शास्त्रीय संगीत कम सहयोगी नहीं है। इस कला-विधा का आयोजन बिना सम के होता ही नहीं।

संगीत में जिस विन्दु पर लय और [illegible] एक-दूसरे से मिलते हैं उसे सम कहते हैं। [illegible] है प्रकृति की विभिन्नता-सामयिकता और [illegible] है एकत्व-शाश्वतता। इन दोनों के मिलन [illegible] संस्कृति बनती है। संस्कृति न तो प्रकृति [illegible] यथास्थिति की स्वीकृति है, न विद्रोह। [illegible] विभिन्नता में संस्कार द्वारा याचित एकत्व [illegible] नाम है। "प्राकृतिक शक्तियों का मन[illegible] संयोजना विकृति है और सामाजिक मंगल [illegible] दृष्टि से उनका संयोजन संस्कृति है।" आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा दी [illegible] संस्कृति की इस परिभाषा के पीछे पूरी भा[illegible] मनीषा की सहमति है। गोस्वामी तुलसी [illegible] भी असंस्कृति प्रकृति के व्यक्ति चरित्र [illegible] साहित्य नहीं मानते, कहते हैं ऐसे लेख [illegible] तो वाणी (सरस्वती) सिर पीट-पीट [illegible] पछताने लगती हैं –

प्राकृतजन कीन्हें गुनगाना। सिर [illegible] गिरा लागी पछताना।।

सरस्वती प्रकृति की भिन्नता और [illegible] अस्तित्व युद्ध नहीं चाहती, वह सं[illegible] चाहती है – सबको एकात्म बोध देकर [illegible] पिलाने वाली संस्कृति।

संस्कृति का वास्तविक अर्थ [illegible] भारत के मानस से जितना ही उतर[illegible] खंड-खंड अस्तित्व भेद का शोर भी उतन[illegible] बढ़ा है। 'कल्चर' के अर्थ में अनेक प्र[illegible] की तथाकथित संस्कृतियाँ रोज दिन ब[illegible] बिगड़ती रहती है। क्या 'कल्चर' का समाना[illegible] शब्द है संस्कृति? जिस शब्द के अर्थ बोध [illegible] देश की सोच और सृजन टिका हो, उसे [illegible] गंभीरता से लेना होगा। राष्ट्र की समग्र सांस्कृ[illegible] चेतना का महत्वपूर्ण अंग है जोड़ना। देश [illegible] अनेक अंचलों के सांगीतिक स्वरों को एक[illegible] में गूँथने का काम शास्त्रीय संगीत का नि[illegible] है। यह सिर्फ मनमोहक कौतुक या विस्मयक[illegible] चमत्कारी नहीं है। वा०रा० देशपाण्डे का क[illegible] बिल्कुल उचित है कि, 'स्वरों का अलग-अल[illegible] गत, आकार, कमोबेश न जाकत के [illegible] बनाकर ढेर लगाना एक बात है और उन स्व[illegible] को एक खास ढंग का एकात्म गुलदस्ता बन[illegible] बिल्कुल अलग बात।" शास्त्रीय संगीत इ[illegible] एकात्म भाव के पोषण से संस्कृति को चरितार्[illegible] करता है।

Scanned with OKEN Scanner

सेलस्टे ने साफ कहा, 'हमारा हित इससे जुड़ा हुआ है।' इसलिए एनरॉन के रास्ते में कोई बाधा नहीं रहना चाहिए।

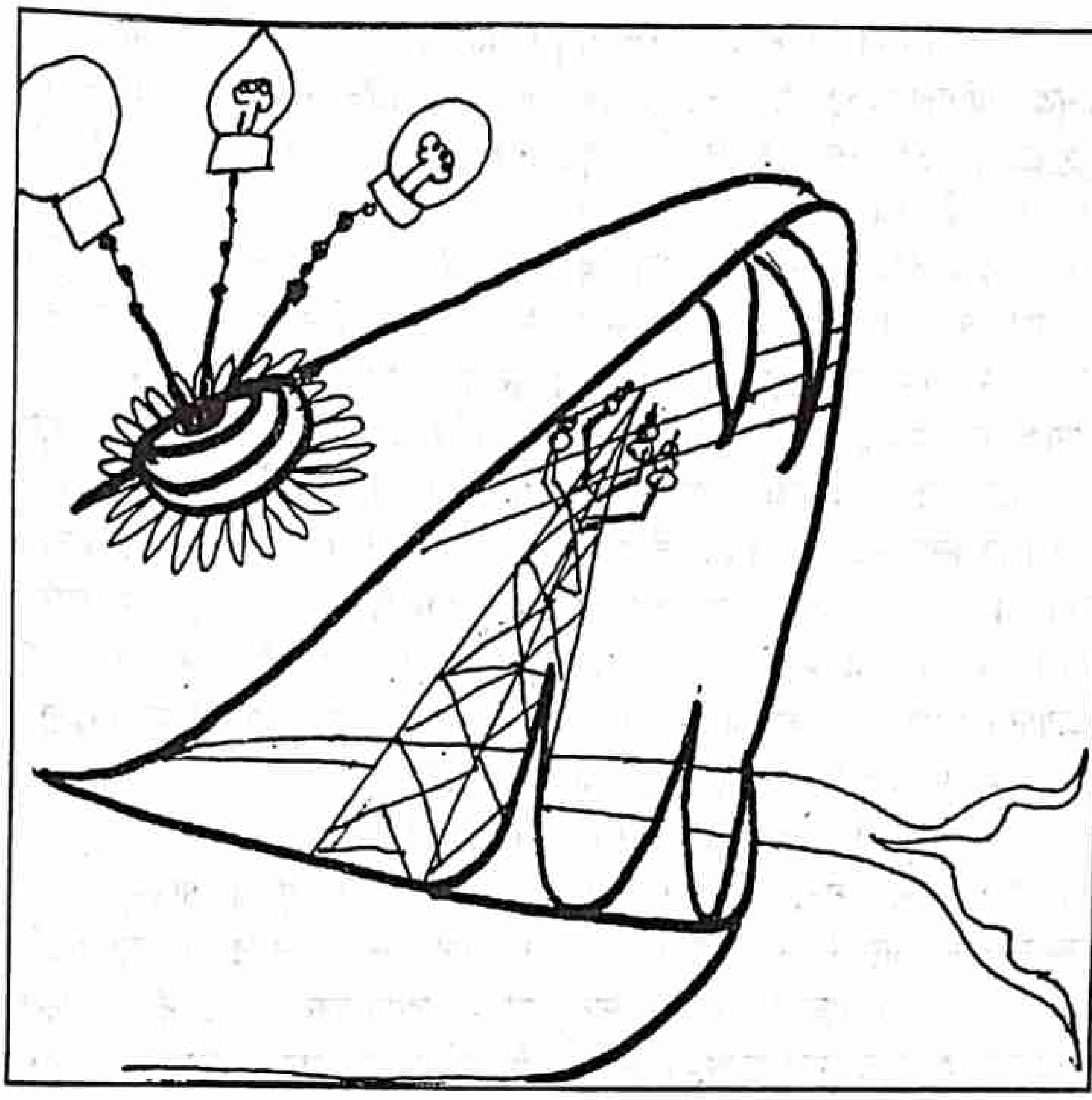

एनरॉन के ग्रहण में महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल

■ धीप्रज्ञ द्विवेदी

एनरॉन एक अमरीकी कंपनी है। यह अमरीका में जार्ज बुश की रिपब्लिकन पार्टी का आर्थिक सहयोगी है यानी जार्ज बुश की राजनीति के व्यवसाय में पैसा लगाने वाली कंपनियों में से एक सेठ। इन दिनों जार्ज बुश अमरीका के राष्ट्रपति पद पर बैठ चुके हैं तो एनरॉन के हित के लिए अपनी राजनीतिक क्षमताओं का उपयोग करेंगे ही। भारत के अमरीकी राजदूत रिचर्ड सेलस्टे एक प्रतिनिधि मंडल लेकर महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री विलासराव देशमुख से एनरॉन कंपनी के व्यवसायिक हितों के लिए बातचीत करने पहुँचे। सेलस्टे ने साफ कहा, 'हमारा हित इससे जुड़ा हुआ है।' इसलिए एनरॉन के रास्ते में कोई बाधा नहीं रहना चाहिए। अमरीका के राजदूत एनरॉन की पैरवी में इसलिए गए कि वह बुश को राजनीति करने के लिए पैसा देता है और बुश सेलस्टे को भारत का राजदूत बनाकर भेजते हैं। एनरॉन बुश और सेलस्टे एक ही लॉबी के लोग हैं। अमरीकी अर्थनीति और राजनीति देखिए किस प्रकार एक-दूसरे के सहयोग से फल-फूल रहीं हैं। राजनीति प्रशासन से इस काम को पूरा कराती है। पैसों पर खड़ी होने वाली व्यवस्था का यही बेपर्द चेहरा है। भारत के व्यवसायी भी इस प्रकार की मजबूत भूमिका के लिए जरूर चिंतित होंगे। लेकिन औद्योगिकीकरण के अभाव में भारत की अधिकांश जनता खेती, छोटे उद्यमों और बेरोजगारी में ही फँसी हुई है। वह सही ढंग से विदेशी तर्ज पर भोगोन्मुख तकनीकी-मनुष्य नहीं बन पायी है जो एक इशारे पर या किसी उपहार के पैकेट पर कंपनी मालिक की इच्छा से नेता को वोट दे। यही पिछड़ापन हमारे देश की कंपनियों को एनरॉन बनने में बाधा बन रहा है।

यह भी संभव है कि 'एनरॉन की खर्चीली शिक्षा-प्रणाली' से देशी कंपनियाँ ठीक-ठीक जुड़ नहीं रही हों। एनरॉन कंपनी जब पहली बार भारत में आई उसने अपना कारोबार फैलाने के लिए पदासीन लोगों को शिक्षित किया उसके एक प्रवक्ता ने उस समय कहा था कि बीस मिलियन डॉलर तो उसने केवल भारतीयों को शिक्षित करने में लगा दिया। इस शिक्षा के चपेट में महाराष्ट्र के पूर्व मुख्यमंत्री शरद पवार, केंद्रीय उर्जा मंत्री एन.के.पी. साल्वे और सोलह प्रतिशत लाभ की काउंटर गारंटी देने वाली केंद्र सरकार के तत्कालीन प्रधान श्री नरसिंहाराव के आने की संभावनाएं उस समय के अखबारों में व्यक्त की गई थी।

तब से महाराष्ट्र राज्य की राजनीति सत्ता में दो चक्रों के परिवर्तन हो चुके हैं। शरद पवार द्वारा एनरॉन के पक्ष लिए जाने के खिलाफ आवाज उठाकर भाजपा-शिव सेना गठबंधन विजयी हुई। उसने जनता से वादा किया था हम चुनाव में जीतेंगे तो एनरॉन को समुद्र में उठा फेंकेगे। पर ऐसा सरकार में आने के बाद यह गठबंधन कुछ नहीं कर सका। उसने एनरॉन पर मुकदमा ठोकने का वादा किया था यदि यह मुकदमा हुआ होता

Scanned with OKEN Scanner

तो एनरॉन पर रिश्वत देने का आरोप लगता। प्रसिद्ध अधिवक्ता एफ.एस. नरीमन इस विश्वास से मुकदमा लड़ने के लिए तैयार थे कि उनकी जीत निश्चित है पर अफसरशाही ने महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री गोपीनाथ मुंडे को गुमराह किया कि नरीमन एनरॉन की ओर से काम करेंगे। गुमराह करने और गुमराह होने वाले दोनों तरह के लोगों को दोषी माना जाना चाहिए। महाराष्ट्र की भाजपा-शिवसेना गठबंधन सरकार के दिनों एनरॉन के लिए सरकारी तंत्र को पटाने में रेबेका मार्क नाम की अमरीका और संजय भटनागर की सफल भूमिका को भी याद की जाता है बाद में इन दोनों श्रमशील चमत्कारियों का एनरॉन से पत्ता साफ हो गया। कहते हैं, जब शिवसेना प्रमुख से रेबेका मिली, उनके रूख में नरमी आई थी।

१९९२ ई० में एनरॉन कंपनी के साथ महाराष्ट्र में बिजली उत्पादन का प्रोजेक्ट लगाने का समझौता हुआ दिसंबर १९९३ ई० ७०० मेगावाट बिजली खरीदने का करार एनरॉन और महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल (मराविम) के बीच हुआ। इस समझौते में बिजली की कीमत और बिजली के उत्पाद में किसका कितना हिस्सा होगा – इससे संबंधित समझौता में गुप्त रास्ता अपनाया गया। इतना ही नहीं चूँकि समझौता बीस वर्ष के लिए था, बीस वर्ष तक इस मामले को गुप्त रखने की योजना भी बनाई गई। इस योजना पर अमल भी हो रहा था। परंतु 'द हिन्दू' नामक दैनिक पत्र ने इस गुप्त योजना का पर्दा उठाना शुरू कर दिया। कठिन परिश्रम के बाद जब एनरॉन से हुए समझौते के प्रपत्र प्राप्त हुए और उसका विश्लेषण किया गया तो ज्ञात हुआ कि यह महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल और बिजली के ग्राहकों के लिए घातक है। जून १९९५ में इस समझौते का विश्लेषण सहित पूरा विवरण प्रकाश में आ गया।

इस समझौते के अनुसार एनरॉन ने महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल से बिजली की खरीद करते समय दो प्रकार के मूल्य की शर्त लगाई थी। पहला, क्षमता मूल्य (कैप्सिटी चार्ज) और दूसरा उर्जा मूल्य (एनर्जी चार्ज)। एनरॉन-उपक्रम की कुल लागत, उस लागत का व्याज और अन्य खर्च संभावित लाभ के साथ पूरी देनदारी के लिए महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल को जिम्मेदार ठहराया गया था। यह भी समझौते में दर्ज हुआ था कि यदि बिजली नहीं खरीदी गई तब भी निर्धारित पैसे एनरॉन को देने पड़ेंगे। यह समझौता एनरॉन के पहले चरण की ७०० मेगावाट बिजली के लिए ही था। एनरॉन उपक्रम का दूसरा चरण शुरु करना है या नहीं यह निर्णय बाद में होने वाला था। पहले चरण के समय क्षमता मूल्य और उर्जा मूल्य दोनों को जोड़कर बिजली की प्रति यूनिट कीमत २ रुपया ८० पैसा होगा – यह तय किया गया था। यह भुगतान रुपए में नहीं, डॉलर में करना है – यह भी शर्त थी। कुल मिलाकर इस बीस वर्ष के समझौते में पैसा ऐंठने का एक बहुत चालक चक्रव्यूह बनाया गया थ।

मार्च, १९९५ में आई भाजपा-शिवसेना गठबंधन सरकार ने एनरॉन का पहला समझौता रद्द कर दिया। एनरॉन अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में पहुँची। महाराष्ट्र सरकार मुंबई उच्च न्यायालय में याचिका देने गई। इस समझौते में व्याप्त भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाया गया लेकिन ऐसा चमत्कार हुआ कि कुछ ही समय बाद एनरॉन से फिर समझौता हुआ। इसमें कुछ सुधार किए गए। फिर भी एनरॉन महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल के गले में बँधा भारी पत्थर बनकर लटका रहा। तीन वर्ष पहले तक महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल देश का सबसे धनी उपक्रम था। आज उसे एनरॉन ने दीवालिया बनाकर रख दिया है एनरॉन के साथ उर्जा खरीद के समझौते ने महाराष्ट्र विद्युत बोर्ड को अगले बीस वर्षों के लिए दासत्व में जकड़ दिया है। यह एनरॉन द्वारा उत्पादित सम्पूर्ण बिजली को उसकी कीमत जोड़ कर ३० प्रतिशत गारंटी वापसी के आधार पर खरीदने को विवश हैं। लेकिन, एनरॉन द्वारा उत्पादित बिजली का मूल्य किसी भी बंधन में नहीं है। दाभोल में बिजली उत्पादन के लिए आयाति तरल प्राकृतिक गैस का उपयोग किया जाता है जिसका आयात भी एनरॉन के अपने विदेशी गैस क्षेत्र से किया जाता है। अत: एनरॉन एक उर्जा उत्पादक की अपेक्षा गैस विक्रेता अधिक है।

स्वदेशी जागरण मंच एवं एनरॉन योजना के विरोध में सक्रिय अन्य लोगों ने भी इसकी बुराइयों को उठाया था। इसके दोषों को निम्न बिंदुओं में रेखांकित किया जा सकता है

१. जब तक यह उपक्रम पूरा हो इसका पूंजीगत मूल्य ४०% बढ़ जाएगा।

२. आयातित तरल प्राकृतिक गैस उत्पादन हेतु बहुत महँगा होगा।

३. तरल प्राकृतिक गैस का आयात भी एनरॉन से ही खरीद के वायदे के बा इसे वैश्विक बाजार से निर्धारित होने के छोड़ दिया गया है।

४. तरल प्राकृतिक गैस का मूल्य में क्या होगा, इसे बिना निर्धारित छोड़ गया है क्योंकि मुद्रा स्फीति से रुपए और मूल्यों में आता रहता है।

५. महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल सस्ती बिजली उपलब्ध होने पर भी एनरॉन महँगी बिजली ही खरीदनी होगी।

महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल के दीवा होने का पूरा खतरा है क्योंकि अनिवार्य से बिजली का मूल्य ज्यादा होगा।

जब तत्कालीन सरकार ने इस पर नहीं दिया तब स्वदेशी जागरण मंच एव ने इसका बड़े पैमाने पर विरोध शुरू कि स्वदेशी जागरण मंच ने इसके गंभीर परि एवं एनरॉन के धोखेबाज चरित्र को लि रूप में भाजपा-शिवसेना की महाराष्ट्र स को दिया। स्वदेशी जागरण मंच की इसी के आधार पर महाराष्ट्र सरकार ने पहले योजना को बंद कर दिया लेकिन एन धोखेबाजी एवं रिश्वत से महाराष्ट्र अफसरशाही को खरीद कर सरकार पर बनाना शुरू किया। अफसरशाही ने गुप्त से सरकार की अवहेलना शुरू कर दी तक कि एक अधिकारी ने तत्का उपमुख्यमंत्री और उर्जा मंत्री गोपीनाथ मुं भी गलत सूचना दी। अफसरशाही असहयोग से एनरॉन को इतना समय मिल कि वह सरकार में भी लोगों को अपने अ बदल सके।

इसका परिणाम यह निकला भाजपा-शिवसेना सरकार ने एनरॉन पुनर्समीक्षा की और पहले की अपेक्षा बड़े और ज्यादा आपत्तिकारक योजना स्वीकृति दे दी।

और अब कांग्रेस की सरकार अपने बुरे कर्मों का फल भोग रही है। जितनी

Scanned with OKEN Scanner

भविष्यवाणियाँ इस योजना के लिए की गई थी वे सभी सही साबित हो रही है। आयातित गैस का मूल्य दुगुना हो चुका है, रुपए का मूल्य ३२ रुपए प्रति डॉलर से गिरकर लगभग ४८ रुपए प्रति डॉलर हो चुका है। इसमें सबसे फायदे में अधिक लाभ एनरॉन के हुआ है और महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल केवल हानि में है।

दाभोल की बिजली जिसका मूल्य महाराष्ट्र की अफसरशाही ने २.२० रुपए प्रति यूनिट तय किया था आज ७.८० रुपए प्रति यूनिट है। यह सच है कि एनरॉन अभी नापथा का उपयोग कर रहा है बाद में एल०एन०जी० का उपयोग करेगा लेकिन इससे भी महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल को कोई लाभ नहीं होगा।

समझौते के अनुसार महाराष्ट्र विद्युत मंडल ऊर्जा खरीदे न खरीदे हर हालत में उसे एनरॉन को उसकी उर्जा का उत्पादित मूल्य देना है। विद्युत मंडल अपनी आवश्यकता की केवल २० प्रतिशत विद्युत एनरॉन से खरीदती है लेकिन उसे अपनी कुल आमदनी का ६०% प्रतिशत अर्थात् वार्षिक १२००० करोड़ रुपए में से ६,००० करोड़ रुपए एनरॉन को देने होते है, अगर अब सरकार एनरॉन से समझौते को रद्द भी करे तो उसे समझौते के अनुसार ३५,००० करोड़ रुपए क्षतिपूर्ति के रूप में एनरॉन को देना होगा।

महाराष्ट्र राज्य की कुल आमदनी ही २४,००० करोड़ रुपए है तो वह एनरॉन को क्या देगी?

केंद्र सरकार ने इस मुद्दे पर यह कहा है कि वह जो भी पैसा महाराष्ट्र को देगी उसको अपने महाराष्ट्र के लिए केंद्र द्वारा दिए जाने वाले निश्चित योजना खर्च में से काट लेगी। अंततः यह भी महाराष्ट्र के उपर ही पड़ेगा।

पर्यावरण की दृष्टि से तरल प्राकृतिक गैस उचित ईंधन नहीं है। योजना आयोग ने आयातित तरल प्राकृतिक गैस को ईंधन के रूप अनुमति देकर गलती की है उसने बहुत बाद में (जुलाई २००० में) स्वीकार किया।

नवीनतम खोज के अनुसार केवल कोयला आधारित उर्जा उत्पादक ईकाइयाँ ही सस्ती बिजली उत्पादित कर सकती हैं। लेकिन यह विचार एनरॉन से मिलने वाली हानि के बाद आया।

जनवरी २००१ आते-आते महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल ने एनरॉन से बिजली लेना बंद कर दिया। जिसे तीन दिन बाद फिर से चालू किया गया यह कहते हुए कि जरूरत पड़ने पर एनरॉन की बिजली ली जाएगी। यह जरूरत पड़ने की परिस्थिति कैसे बनती है इसमें एनरॉन का दबाव है, तो यह भी है महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल द्वारा उत्पादित बिजली का ४० प्रतिशत हिस्सा वितरण में गोल हो जाता है विदर्भ इंडस्ट्रियल एसोसिएशन ने याचिका दायर कर महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल पर आरोप लगाया है कि यह बिजली का फर्जी किल्लत पैदा करता है। महाराष्ट्र हाई कोर्ट की नागपुर बेंच ने इसकी सुनवाई भी की है। राज्य विद्युत मंडल से जवाब भी माँगा है। निजीकरण का दबाव किसी सार्वजनिक उद्यम को आंतरिक रूप से तोड़ने का प्रयास करती हैं। संभव है महाराष्ट्र राज्य का यह लाभकारी और समृद्ध बिजली उत्पादक इकाई भी निजीकरण के दीमकों से क्षतिग्रस्त हुई हो।

वर्तमान महाराष्ट्र की कांग्रेसी सरकार और राष्ट्रवादी कांग्रेस में भी मतभेद की खबरें मिलती हैं। आज एनरॉन को आदरपूर्वक अपने घर में बैठाने वाली कांग्रेस के विभाजित घड़े भी आपस में टकरा रहे हैं। मुख्यमंत्री भी विलासराव देशमुख एनरॉन के साथ हुए समझौते के मुताबिक ३५,००० करोड़ रुपए देकर एनरॉन से गर्दन छुड़ाने की समस्या समझ रहे है। एनरॉन के दूसरे चरण को रोकने की बात राज्य कैबिनेट की बैठक में उठी थीं विद्युत मंडल का कहना था कि यदि एनरॉन के दाभोल विद्युत उपक्रम से बिजली लेना जारी रखा गया तो उसे २००१ अक्टूबर तक सरकार को लगभग सात हजार करोड़ रुपए देने होंगे। जबकि राज्य को अतिरिक्त बिजली की जरूरत नहीं है। फिर भी महाराष्ट्र सरकार एनरॉन समझौते को रद्द करने में हिचक रही है। यदि यह समझौता जारी रहता है तो भुगतान कीमत में हर साल यह रकम मुद्रा स्फीति से आठ से नौ प्रतिशत तक बढ़ती जाएगी इस आधार पर १५ सालों में एक बिजली उपभोक्ता को एक वर्ष में तीन लाख रुपए का बिजली-बिल चुकता करना पड़ेगा।

विपरीत होती परिस्थिति में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री ने एनरॉन से राज्य सरकार के चल रहे विवाद में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी से हस्तक्षेप करने का अनुरोध किया। केंद्रीय बिजली मंत्री सुरेश प्रभु ने समाधान के लिए केंद्रीय वित्तमंत्री से भी मुलाकात कर चुके हैं। केंद्र से प्रति गारंटी सहायता मांगे जाने के बाद श्री प्रभु ने एनरॉन से बातचीत का संकेत भी दिया। उन्होंने कहा कि केंद्र अमरीकी कंपनी एनरॉन की डाभोल विद्युत उपक्रम की दी गई अपनी प्रति गारंटी में चूक नहीं कर सकता। केंद्र सरकार नवंबर, २००० के लिए महाराष्ट्र राज्य विद्युत मंडल पर बकाया ७८ करोड़ रुपए का भुगतान कर सकती है।

अब तक के एनरॉन विवाद ने अब एक नया मोड़ लेना शुरू कर दिया है। एनरॉन ने भुगतान नीति की समीक्षा करने पर सहमति जतायी है और केंद्र सरकार की प्रति गारंटी लेने से बचने का निर्णय किया है। राज्य सरकार ने भी एनरॉन की विद्युत उपक्रम की समीक्षा के लिए पूर्व केंद्रीय गृह सचिव डॉ. माधव गोड़बोले की अध्यक्षता में एक समिति बनाई है। महाराष्ट्र सरकार और एनरॉन के बीच चल रहा द्वंद्व अभी भी जारी है। एनरॉन का चरित्र अमरीका में भी विवाद का विषय बना हुआ है। अमरीकी मीडिया एनरॉन को एक खलनायक मान रही है। इसका कारण यह है कि कैलिफोर्निया में उर्जा संकट के दौरान एनरॉन का वही चरित्र सामने आया जो भारत में नार्थग्रीड फेल हो जाने से उत्पन्न बिजली संकट के दिनों में देखा गया। एनरॉन ने कैलिफोर्निया की राज्य सरकार को सहयोग नहीं दिया और वहाँ की जनता बिजली संकट से पीड़ित हुई। यही काम एनरॉन ने भारत में भी किया था। इस तरह की किसी कंपनी को नैतिकता विहीन होने के कारण धन कमाने का प्रश्रय दुनिया की किसी भी सरकार में नहीं मिलना चाहिए। मगर इस काम को कोई जनतांत्रिक सरकार तभी कर सकती है जब उसे सत्ता में आने के लिए धन की इतनी बड़ी आवश्यकता नहीं हो, जिसके बदले पूँजीपतियों के हाथों जनता का हित बेचना पड़ जाए। सुना जाता है कि विकास कार्यक्रम ने भी पिछले साल विकासशील देशों को मूर्ख बना कर ठगने वाली एनरॉन जैसी बहुराष्ट्रीय लूटेरी कंपनियों पर अध्ययन करने की बात की थी। ■

Scanned with OKEN Scanner

कौमुदी महोत्सव

■ डॉ. कामेश्वर उपाध्याय

{'वेलेन्टाइन डे' के पक्ष में तर्क गढ़ने वाले यूरंडपंथी पढ़पशु परंपरा के वैभव से अनभिज्ञ है। इसलिए ये लोग हमारी संस्कृति को रूढ़िग्रस्त मानकर विभिन्न कोणों से निरर्थक आलोचना करते हैं। हमारे वैभव सम्पन्न राष्ट्र में हर्षोल्लास के उत्सव कौमुदी महोत्सव का कितना उद्दाम रूप प्रचलित था इसे प्रस्तुत लेख से जाना जा सकता है। भारत के मनीषियों ने धर्म और अर्थ के साथ काम को स्थापित किया। काम की मूल अवधारणा सबसे अधिक विचलित हुई। संभवतः इसमें हमारी सुनियोजनकारी संस्था का हस्तक्षेप संस्कार पद्धति तक केंद्रित रहा हो और ऐतिहासिक परिस्थितियाँ बदलती गई हो। सं०}

हमारी वैज्ञानिक मान्यताओं, महोत्सवों, पर्वों, व्रतों को पहले तो व्यर्थ कह कर नकारा गया और बाद में चुपके से, धीरे से दिव्यपर्वों, महोत्सवों के स्थान पर ईसाई संस्कृति के मानकों को स्थापित किया जा रहा है। आज ईसाइयत को फैलाने के लिए तीन सौ पैंसठ दिनों को किसी न किसी 'डे' से जोड़ दिया गया है।

इधर कुछ वर्षों से लगातार भारतवर्ष की दिव्य सांस्कृतिक परंपराओं पर मीडिया, अखबार, पोस्टर, बैनर, आयोजन एवं रंगमंचों के माध्यम से हमला किया जा रहा है। हजारा समाज सुषुप्ति, आलस्य एवं निराकाक्षिता के कारण इस हमले से अपने को अनजान बनाए हुए है और कुछ लोग अज्ञान या लोभवश इस पाश्चात्य दुरभिसंधि में सम्मिलित भी होते जा रहे हैं।

हमारी वैज्ञानिक मान्यताओं, महोत्सवों, पर्वों, व्रतों को पहले तो व्यर्थ कह कर नकारा गया और बाद में चुपके से, धीरे से दिव्यपर्वों, महोत्सवों के स्थान पर ईसाई संस्कृति के मानकों को स्थापित किया जा रहा है। आज ईसाइयत को फैलाने के लिए तीन सौ पैंसठ दिनों को किसी न किसी 'डे' से जोड़ दिया गया है।

भारतवर्ष की धरती पर जीवन को आनंद एवं उल्लास में परिणत करने की सहस्रों विधाओं का वैज्ञानिक प्रयोग हुआ था जिसे स्वतंत्र भारत में आरंभ के कई दशकों में बुर्जुआ, दकियानुस, अवैज्ञानिक, उच्छृखल, भारतवाही, सामंतवादी, त्याज्य तथा अंधविश्वास कह कर किनारे कर दिया गया। बाद में धीरे-धीरे उन सभी चीजों से बदतर एवं विकृत संस्कृति को भारतवर्ष के सनातन समाज पर थोपा जा रहा है। यह दुरभिसंधि चुपके से, पदचापरहित, हमारे जीवन में अश्लील, हत्यारी, उच्छृकल भोगी अवैज्ञानिक संस्कृति को बढ़ाने का जी-तोड़ प्रयास कर रही है। आज सांस्कृतिक कार्यक्रमों के नाम पर पेप्सी एवं कोकाकोला द्वारा नग्न नृत्य कराया जा रहा है। वस्त्र फेंकने की होड़ लगी हुई है। भारतीय साधकों को नग्न एवं असभ्य कहने वाले अंग्रेज आज नग्न नृत्य पर उतर आए हैं। कुत्सित चेष्टाए अभिनय कही जा रही है। अश्लील हरकतें आधुनिक[illegible] कही जा रही है। देह भांजने एवं उछलकूद को नृ[illegible] कहा जा रहा है। चैत्री, फाल्गुनी, कजरी, शास्त्री[illegible] गायन को पाप संगीत द्वारा दबाया जा रहा है। ह[illegible] आगे बढ़ कर अपनी सांस्कृतिक परंपराओं [illegible] अपनाना होगा तभी हम इन सभी का जवाब दे सकें[illegible] हम अपनी सांस्कृतिक पवित्रता का बलिदान नहीं क[illegible] सकते न तो विस्मृत ही कर सकते हैं। भारतवर्ष [illegible] प्राचीन कोई भी पर्व, महोत्सव या व्रत ऐसा नहीं है [illegible] वैज्ञानिक नहीं हो। तीन सौ पैंसठ दिन में तेरह सौ [illegible] अधिक व्रत-पर्व-महोत्सवों की स्थापना भारत [illegible] प्राकृतिक अवस्था, भौगोलिक प्रभाव तथा सू[illegible] महत्त्व को ध्यान में रखकर ऋषियों के द्वारा हुयी [illegible] इन सभी परंपराओं को नकारने से पहले एक बा[illegible] विचार करे – कहीं इसके पीछे कोई रहस्य तो न[illegible] छुपा है?

विगत कुछ वर्षों से भारतवर्ष में 'वेलेण्टाइन डे' का प्रभाव तथा प्रचार बढ़ा है। उपभोक्तावादी संस्कृ[illegible] और लाभ लेने वाला वर्ग इसे व्यवसाय के रूप [illegible] बढ़ा रहा है। साथ-साथ एक बृहत्तम विराट् समा[illegible] धीरे-धीरे ईसाइयत को स्वीकार भी करता जा रहा है[illegible] इसके पीछे विश्व कार्ड व्यवसाय तथा प्रायोजकों [illegible] धूर्तता एवं लाभ कमाने की प्रवृत्ति है और भारती[illegible] समाज की तंद्रा, विचारहीनता भी। इसी तंद्रा [illegible] सुषुप्ति को तोड़ने के लिए अपने प्राचीन 'कौमुदी महोत्सव' को स्मरण कर उसे फिर से मनाने का [illegible] करना चाहिए। यह उत्सव शरत्पूर्णिमा के दिन मना[illegible] जाता था। यह महोत्सव प्राचीनकाल से लेकर चंद्रगु[illegible] मौर्य के काल तक मनाया जाता रहा है।

कौमुदी महोत्सव को आमात्य चाणक्य ने [illegible] करवाया था। इसके पीछे दो कारण थे –

(क) देश की तत्कालीन राजधानी पाटलीपुत्र उस दिन मदोंमत्त हो जाती थी तथा पर्व मनाने जनता एवं राजा राजगिरि चले जाते थे। फलतः राजधानी पर आक्रमण की आशंका बनी रहती थी।.

(ख) उच्छृंखलता के कारण समाज की मर्यादाएं टूटने लगी थी।

हमें इस महोत्सव को सात्विक ढंग से मनाना चाहिए। भारतीय देव संस्कृति पर हो रहे हमलों को अपनी चेतना से पराजित करके ही हम अपनी श्रेष्ठता और अन्य प्रतीकों को पुनः स्थापित कर सकते हैं।

कौमुदी महोत्सव है क्या?

प्रातः प्रभृति राजा च आज्ञापयति कौमुदीम्।
देवरात्रिं च देवस्य रुद्रस्यासुरनाशिनीम्॥ (स्कन्दपुराण)

कौमुदी महोत्सव शरदपूर्णिमा के दिन एवं रात्रि में मनाया जाने वाला अनुराग पर्व है। प्राचीन काल में इसे मनाने के लिए राजाज्ञा जारी होती थी और महानगर के सभी पथ, गोपुर, वीथिकाएं एवं राजमार्ग सुगंधित द्रव्यों एवं पुष्पपरागों से सुवासित किए जाते थे।

इस महोत्सव में युवक, युवती, प्रेमी युगल, दंपत्ति सुसज्जित एवं सुवासित होकर सभा स्थल पर जाकर आनंद उठाते हैं और अपनी सुकोमल भावनाओं को अपने प्रेमी हृदय से प्रकट करते हैं। एक-दूसरे से परस्पर प्रेम करने वाले युवक-युवती, पति-पत्नी, मित्र-मैत्राणी एक-दूसरे को उपहार से प्रीत करते है। उपहारों में पुष्प, सुगंधियाँ, प्रतीक चिन्ह, वस्त्र, अलंकार, अविस्मरणीय कृतियाँ एवं महार्घ रत्न अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुरूप दिए जाते हैं। उत्तमोत्तम भोज्य एवं आनंददायक साहित्यिक शब्द एक दूसरे को समर्पित किए जाते हैं।

ताम्बूल, पुष्प सुगंध, कुंकुम, अक्षत एवं अन्य सामग्री जिससे आप अपनी भावनाओं को शब्द दे सकते हैं एवं चित्र, कढ़ाई तथा गीत के माध्यम से भी अपने प्यार को मुखरित कर सकते हैं।

कौमुदी महोत्सव का मंत्र

'भावयामि'	(आई लव यू)
'परिभावयामि'	(आई टू)

ये दो क्रियापरक शब्द कौमुदी महोत्सव के प्रेममंत्र है। नौकायन, पतंग उड्डयन, वाहन संचालन, अश्वारोहण, पिकनिक इस महोत्सव के आयाम है।

आज की रात चंद्रमा की पूजा करके उनसे प्रार्थना कर अपने प्रेम की दीर्घजीविता और अटूट संबंध का वरदान मांगा जाता है। यह कौमुदी महोत्सव का शुभ कर्म है।

अपने प्यार को सजीव, जागृत एवं अविस्मरणीय बनाने के लिए अनंतकाल के प्रतीक शिवलिंग को प्रेमी युगल आदि आज की रात में दूध, घी, मधु, शक्कर, इक्षुरस से स्नान कराते हैं तो उनके पारस्परिक संबंध में कभी विच्छेद नहीं होता। वे अनंत भटकाव एवं पराजय से बच सकते हैं।

लड़कियाँ अपने अभीष्ट प्यार की प्राप्ति के लिए भगवती पार्वती से प्रार्थना कर सकती हैं –

हे गौरी शङ्करार्धाङ्गरप्रिया।
तदामां कुरु कल्याणी कान्तकान्तांसुदुर्लभाम्॥

(हे भगवती पार्वती आपने जैसे अपने अभीष्ट प्यार को शिव के रूप में प्राप्त किया था वैसे ही आपकी आराधना से हम अपने अभीष्ट प्यार को प्राप्त कर सकें।)

युवक अभीष्ट प्यार को प्राप्त करने के लिए भगवती दुर्गा से प्रार्थना कर सकते हैं –

ॐ क्लीं पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् क्लीं ॐ॥

विवाहिताएं अपने दाम्पत्य को चिरस्थायी बनाने हेतु अशून्य शयनव्रत करें।

तरुणाः सह योषिद्भिः समन्तात् पर्यटन्तु च।
रममाणा हसन्तश्च गायन्तो नृत्तसेविनः॥
उपहारांश्च विविधान् शयनानि महान्ति च।
महादेवस्य पूजां च गन्धपुष्पादिकीं शुभाम्॥

वीरमित्रोदय के कौमुदी-महोत्सव प्रकरण में इस ऐतिहासिक सत्य का दर्शन होता है जिसका आशय है – कौमुदी महोत्सव के दिन प्रेमी युगल साथ-साथ घूमें, आनंद करें, हँसें, गीत गाए, नृत्य करें, प्रीत करें, एक-दूसरे को उपहार दें, भगवान शिव को दूध, पुष्प से स्नात-सज्जित कर अपने प्यार के अमरत्व की याचना करें।

विश्व भारतीय संस्कृति एवं उसके प्राचीन मानक ग्रंथों का धीरे-धीरे अनुकरण कर रहा है। खासतौर से पश्चिमी समाज वास्तुविद्या, ज्योतिष, आयुर्वेद, तंत्र-मंत्र और कला को तेजी से आत्मसात् कर रहा है, परंतु ईसाई मिशनरियाँ इसका लाभ उठाकर सर्वग्राही भारतीय समाज की चित्तवृत्ति को उच्छृंखल बनाने में लगी हुई है। हम अपनी परंपरा को भूलते जा रहे हैं, पर बाहरी लादी हुयी चीज को ढोने में उत्साह भी दिखा रहे हैं। यदि विचार किए जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि महोत्सवों और पर्वों तथा संगीत और नृत्य के माध्यम से भी किस तरह हमें विस्मृति के मार्ग पर चलने को बाध्य किया जा रहा है। कहीं हम अपनी सांस्कृतिक परंपराओं से कट तो नहीं रहे हैं? हमें विचार करना चाहिए कि जब भारत की धरती पर 'मातृनवमी' थी तो 'मदर्स डे' क्यों लाया गया? 'जीवितपुत्रिका' के स्थान पर 'चिल्ड्रेन्स डे' क्यों रखा गया। 'गुरुपूर्णिमा' के स्थान पर 'टीचर्स डे' कैसे आ गया। 'कौमुदी महोत्सव' की जगह 'वेलेण्टाइन डे' को किसने स्थापित किया। 'विश्वकर्मा जयंती' थी तो 'वर्कर्स डे' की क्या आवश्यकता थी? 'चैत्रप्रतिपदा' के स्थान पर 'फर्स्ट जनवरी' को कैसे मान्यता मिल गयी? ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिल जाएंगे। हमें अपनी परंपराओं को सजीवता के साथ मनना चाहिए। अपनी परंपराएं अपनी सांस की तरह जीवनोपयोगी होती है। ■

Scanned with OKEN Scanner

भूकम्प से संबंधित प्राचीन भारतीय भू-वैज्ञानिक सिद्धांत

■ डॉ. प्रकाश पाण्डेय

{१९०५ ई० में काशी में प्रकाशित ग्रंथ 'अद्भुत सागर' के आधार पर लिखे गए शोधपरक इस लेख में विद्वान लेखक ने उक्त शास्त्र के श्लोकों को उधृत किए है जिन्हें स्थानाभाव के कारण नहीं दिया जा रहा है – सं०}

भूकम्प चिरकालिक प्राकृतिक घटना है जिसके विनाशक प्रभाव से विश्व के अनेक भाग क्षतिग्रस्त होते रहते हैं। १८८० ई० से आधुनिक विश्व में इसके वैज्ञानिक अध्ययन का प्रारंभ माना जाता है। जब जॉन मिल्ने के नेतृत्व में 'सीज्मोलॉजिकल सोसायटी' की स्थापना जापान में हुई। ८ अक्टूबर, १९०९ में आंद्रेइजा मोहोरोविखिक द्वारा आविष्कृत पृथ्वी के आंतरिक एवं बाह्य परतों के असातत्य का सिद्धांत जुड़ा। १९५० ई० से परमाणु विस्फोटों के कारण होने वाली प्रतिक्रियाओं को भी भूकम्प के अध्ययन में जोड़ा गया। अनेक उपकरण बने जो पृथ्वी की संरचना से उत्पन्न होने वाली ऊर्जा तरंगों को भली भाँति मापते हैं तथा भूकम्प के विषय में पूर्वज्ञान कराने में सहायक होते हैं। किंतु अभी तक प्राप्त वैज्ञानिक उपलब्धियाँ भूकम्प का समय, स्थान एवं प्रबलता की पूर्व घोषणा करने के विषय में पूर्ण सक्षम नहीं हैं जो कि इन अनुसंधानों का वास्तविक हेतु है।

प्राचीन भारत के भू-वैज्ञानिकों ने भी इस प्राकृतिक घटना के स्वरूप के विषय दीर्घकाल तक अनुसंधान किया था जिस पर आधुनिक वैज्ञानिकों का ध्यान कम ही गया है।

प्राचीन भारत के भू-वैज्ञानिकों ने भी इस प्राकृतिक घटना के स्वरूप के विषय दीर्घकाल तक अनुसंधान किया था जिस पर आधुनिक वैज्ञानिकों का ध्यान कम ही गया है। वैसे तो इस संबंध में प्राचीन समय में पर्याप्त साहित्य की रचना हुई थी। किंतु इस लघु लेख में हम १२वीं शती ईस्वी में बिहार में लिखे गए ग्रंथ अद्भुत सागर के साक्ष्यों को आधार बना कर उन सिद्धांतों का परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं। ये सूचनाएँ आधुनिक भू-विज्ञान के लिए उपयोगी हो सकती है यदि इन्हें वैज्ञानिक परीक्षणों से जोड़ कर अध्ययन किया जाए।

(क) कारण संबंधी सिद्धांत

भूकम्प के कारण से संबंधित अनेक मत विभिन्न ऋषियों द्वारा प्रवर्तित हुए थे जिन्हें हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं – १. प्राथमिक सिद्धांत तथा २. परिष्कृत सिद्धांत।

१. प्राथमिक सिद्धांत

इसके प्रवर्तकों के काश्यप, गर्ग, वसिष्ठ एवं वृद्ध गर्ग प्रमुख थे तथा वराहमिहिर के समय तक ये मत उल्लिखित होते रहे। इन चारों मतों का संक्षिप्त रूप इस प्रकार समझ सकते हैं।

काश्यप मत – पृथ्वी एवं समुद्र दोनों के नीचे अंतस्तल में ऐसी शक्तियाँ (सत्त्व) कार्यरत हैं जिनकी ऊर्जा के संक्षोभ या हलचल से पृथ्वी का बाह्य तल चलायमान हो जाता है जिसे भूकम्प कहते हैं।

गर्ग मत – पृथ्वी की दिशाओं को यथावत् रखने के लिए (उसकी दैनिक गति एवं झुकाव पर किसी अन्य गुरुत्व बल का प्रभाव न पड़ने देने के लिए) उसके रचयिता ब्रह्मा ने ४ शक्तियों को पृथ्वी के जलीय आवरण में स्थित किया है। इन्हें रूपकात्मक भाषा में दिग्गज कहते हैं तथा इनके नाम क्रमशः पूर्व में वर्धमान, पश्चिम में अतिवृद्ध, उत्तर में, पृथु श्रवस तथा दक्षिण में सुवृद्ध हैं। इनके श्वास के रूप में छोड़े गए वायु से भूमि कंपित होती रहती है।

वशिष्ठ मत – जब धरती के वायुमंडल की अति बलवान् वायु अंतरिक्ष की वायु से टकरा कर नीचे गिरती है तब 'निर्घात' नामक भूकम्प होता है।

Scanned with OKEN Scanner

वृद्ध गर्ग मत – प्रकृति के आंतरिक स्वभाव के कारण भूकम्प होता है जो प्रकृति विरुद्ध कार्य करने वाले समाज के लिए अशुभ एवं प्रकृति के अनुकूल कार्य करने वाले समाज के लिए अनुकूल परिणाम देता है।

विष्णु पुराण का मत – पृथ्वी जिस अनंत में स्थित है उसकी 'जृम्भा' मुख विस्तार के प्रभाव से भूरेखा चलायमान होती है।

२. परिष्कृत मत

इस मत के प्रवर्तक पराशर एवं सम्पोषक उशना थे। पराशर ने उस समय भूकम्प से संबंधित प्रचलित सिद्धांतों की गहन समीक्षा करते हुए भूकम्प के संबंध में व्यापक दृष्टि अपनाई। उन्होंने न केवल पृथ्वी की आंतरिक हलचल, निर्माण प्रक्रिया, पर्वतों के निर्माण, रूप परिवर्तन या स्थानांतरण, अनंत या ब्रह्माण्ड के विस्तार के प्रभावों का विवेचन किया, अपितु भूकम्पन की परिभाषा को एक नया आयाम देते हुए उसमें विद्युताघात, पार्थिव आग्नेय प्रभावों (ज्वालामुख विस्फोट), वायुओं के टकराव, महासागरीय या जलावरणीय प्रतिक्रियाओं से होने वाले भूचलन एवं विध्वंसक तथा लाभकारी परिणामों से सम्बद्ध सिद्धांत का प्रवर्तन किया। इस सिद्धांत की घोषणा उन्होंने अपने विश्वविद्यालय में आयोजित संवाद गोष्ठी में की थी। इस सिद्धांत के अनुसार पर्वतों के प्रचलन-प्रतिचलन से जो बड़े पैमाने पर भूकम्प होते थे वे पृथ्वी निर्माण की आदिम अवस्था में अधिक प्रभावकारी थे, जो अब इंद्र (अंतरिक्ष स्थानीय शक्ति) के कारण उतने विध्वंसक नहीं है। इसी प्रकार अनंत की विचेष्टा अथवा अदृष्ट (स्वभाव) की कारकता का सिद्धांत भी प्रासंगिक नहीं रह गया है, अपितु वायु से टकराव, आग्नेय क्रियाएँ, जलावरणीय संक्रियाएँ तथा अंतरिक्ष से पृथ्वी को प्रभावित करने वाली शक्ति (इंद्र) विभिन्न प्रकार के भूकम्पों-निर्घातों के कारण है। इनके द्वारा उत्पन्न भूकम्प के परिणामों का यथावसर विवेचन सम्बद्ध विषय के विद्वान करते रहेंगे।

पराशर के सिद्धांत ने प्रतिष्ठा पाई। गर्ग, वसिष्ठ उशना, से लेकर वराह मिहिर तक सभी भू-विज्ञान के विचारकों ने इसे स्वीकार एवं पल्लवित किया। पराशर ने इन कारकों का सूक्ष्म विवेचन करते हुए बताया कि पृथ्वी पर इन चारों कारकों के प्रभाव का समय निर्धारित किया जा सकता है। यथा – दिन एवं रात के चारों प्रहरों में क्रमशः वायु, अग्नि, अंतरिक्ष की शक्ति (इंद्र) एवं जलावरणीय शक्ति का प्रभाव रहता है। अतः जिस समय भूकम्प हो उसके आधार पर उसके कारक का ज्ञान हो सकता है। पराशर एवं उशना आदि ने इन कारकों के विस्तृत अध्ययन के लिए वायव्य, आग्नेय, ऐंद्र एवं वारुण मंडलों का सिद्धांत विकसित किया। जिसे पहचाने के लिए उस काल में प्रभावी नक्षत्रों की परिगणना की। इससे प्रभावित होने वाले स्थानों का उल्लेख किया तथा इसके हिताहित परिणामों की चर्चा की। इस मंडल सिद्धांत के अनुसंधानार्थ स्वीकृत हो जाने के कारण अन्य ऋषियों ने अपने प्रयोगों एवं अनुसंधानों के आधार पर इसमें परिवर्तन एवं परिवर्धन भी किया। बृहस्पति ने इस चतुर्मण्डलों के सिद्धांत में 'वेलामंडल' के सिद्धांत को प्रस्तावित किया था। उनके अनुसार दिन के प्रहरों के प्रथम याम (शुरू के २ घंटे) एवं रात्रि के यामों के अंतिम याम (अंतिम २ घंटे) वायव्य-आग्नेय-ऐन्द्र एवं वारुण मण्डलों के 'वेला मण्डल' कहे जाते हैं। उशना ने इसकी व्याख्या करते हुए समझाया कि दिन के चार याम आदि क्रम से वायु, वरुण, अग्नि एवं इंद्र के वेला मंडल हैं तथा रात्रि के चार याम दिन के विपरीत क्रम से इंद्र, अग्नि, वरुण एवं वायु के बेला मंडल हैं। किंतु उशना के इस वेला मंडल के सिद्धांत को प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों में प्रतिष्ठा नहीं मिल पाई।

पराशर के सिद्धांत ने प्रतिष्ठा पाई। गर्ग, वसिष्ठ उशना, से लेकर वराह मिहिर तक सभी भू-विज्ञान के विचारकों ने इसे स्वीकार एवं पल्लवित किया। पराशर ने इन कारकों का सूक्ष्म विवेचन करते हुए बताया कि पृथ्वी पर इन चारों कारकों के प्रभाव का समय निर्धारित किया जा सकता है। यथा – दिन एवं रात के चारों प्रहरों में क्रमशः वायु, अग्नि, अंतरिक्ष की शक्ति (इंद्र) एवं जलावरणीय शक्ति का प्रभाव रहता है। अतः जिस समय भूकम्प हो उसके आधार पर उसके कारक का ज्ञान हो सकता है।

भूकम्प के संबंध में पराशर का यह 'मण्डल' सिद्धांत अत्यंत प्रतिष्ठित था। अद्भुत सागर इस संबंध में गर्ग कश्यप, मत्स्य पुराण, विष्णु पुराण, आथर्वणाद्भुत एवं वराह-मिहिर के मयूर चित्र के अनेक उद्धरण देता है जिसमें इन मंडलों के नक्षत्र सिद्धांत एवं शांति आदि का वर्णन है।

(ख) माण्डलिक प्रभाव के क्षेत्र

प्रत्येक मण्डल के प्रभाव क्षेत्र का निर्धारण प्राचीन वैज्ञानिकों ने किया है साथ ही इनके प्रभाव से होने वाले उपद्रवों के लक्षण भी बताए हैं। उदाहरण के लिए वायव्य मण्डल का प्रभाव हस्त, चित्रा, अश्विनी, स्वाती, मृगशीर्ष, पुनर्वसु एवं उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रों में विशेष होता है। इस मण्डल से प्रभावित होने वाले देश – मद्रक, यवन, काम्बोज वाह्लीक (बल्ख), गांधार हैं। मयूर चित्र इसमें वारुण (पश्चिमी देश), मत्स्य, हूण एवं पारसिक देशों की भी गणना करता है। वायव्य मण्डल के प्रभाव से उन क्षेत्रों में वायुजन्य भूकम्प की ही नहीं परस्पर विरोध एवं युद्ध की भी संभावना प्रबल होती है। बृहस्पति की कथन है कि इन क्षेत्रों में भूकम्प आने के एक सप्ताह के अंदर अत्यंत तीव्र वेग से चक्रवात उत्पन्न होता है एवं बालू की बजरी की वृष्टि होती है जो इस बात का

(शेष पृष्ठ ३७ पर)

Scanned with OKEN Scanner

भूकम्प त्रासदी के प्रतिबिम्ब

पी.डी. कार्तिकेय

गुजरात के भूकम्प से कितना नुकसान हुआ इसका लेख-जोखा भारत सरकार से पहले यूनीसेफ और एन.जी.ओ. को संयोजित करनेवाली एक अनाम संस्था के कार्यकर्त्ताओं ने एकत्र कर लिया। इस संस्था के अनुसार लगभग ११ हजार करोड़ की क्षति निजी क्षेत्रों के भवनों की हुई। औद्योगिक भवनों - इकाइयों के नुकसान का आंकड़ा ८ हजार करोड़ है इससे अलग आंका गया है।

२६ जनवरी की गुजरात भूकम्प त्रासदी विभिन्न प्रवृत्तियों के दर्पण में अनेक प्रतिबिम्बों में दिखी। क्या कहें इन्हें - सुखद, दुःखद या घृणित? कुछ भी एक तो नहीं कहा जा सकता। किसी एक प्रवृत्ति से समाज नहीं बनता। यह अनेक प्रवृत्तियों का मिश्रण होता है। इन प्रवृत्तियों में वरीयता किसकी है? इस बात पर निर्भर होता है कि वह समाज कैसा है? किस प्रवृत्ति का वर्चस्व होना चाहिए, इसे निर्णित करना समाज के स्वास्थ्य और दीर्घायु होने के लिए भी आवश्यक है।

गुजरात के भूकम्प से कितना नुकसान हुआ इसका लेख-जोखा भारत सरकार से पहले यूनीसेफ और एन.जी.ओ. को संयोजित करनेवाली एक अनाम संस्था के कार्यकर्त्ताओं ने एकत्र कर लिया। इस संस्था के अनुसार लगभग ११ हजार करोड़ की क्षति निजी क्षेत्रों के भवनों की हुई। औद्योगिक भवनों - इकाइयों के नुकसान का आंकड़ा ८ हजार करोड़ है इससे अलग आंका गया है। सरकारी भवनों का नुकसान १८०० करोड़ रुपये है यूनीसेफ के आंकड़ों में भूकम्प से प्रभावित हुए वच्चों की संख्या भी निकाली गई है यह संख्या ५० लाख से अधिक है।

इस प्राकृतिक आपदा के प्रति सभी लोग समान रूप संवेदित हों भी तब भी अपनी-अपनी प्रवृत्ति के अनुसार ही लोग कार्य करेंगे।

खबर है कि राहत और पुनर्वास के लिए चल रहे कार्य के बीच किसी बहुराष्ट्रीय कम्पनी ने भूकम्प प्रभावित क्षेत्र अंजाद, भचाऊ और भुज में से किसी एक नगर को पर्यटन स्थल के यप में विकसित कर देने की योजना बना ली है। राज्य सरकार को भी इस योजना से कोई नाराज नहीं है उसने 'आपदा पर्यटन' से कुछ परिष्कृत नाम 'आपदा शिक्षण' के लिए इस योजना पर सोचने लगी है। इसमें भूकम्प से क्षतिग्रस्त हुए भवनों और मर्माहत करनेवाले दृश्यों को स्मृति और शिक्षा के बहाने प्रदर्शनीयता प्रदान की जाएगी। यदि यह व्यवसाय लाभकारी निकला तो देश के अन्य भू-भाग भी किसी विनाशकारी प्राकृतिक आपदा की प्रतीक्षा करेंगे। यह प्रवृत्ति एक विदेशी कहानी की याद दिला रही है। उस कहानी का सार संक्षेप यह था कि गरीवी-भुखमरी के वातावरण में एक बालक ये सोच रहा है कि पिता मरे थे तो पड़ोसवालों ने खिलाया था, माँ भी क्यों नहीं मर जाती कि कुछ दिन खाने के लिए मिलें। कहानी में वहाँ के समाज के इस प्रथा आधार बनाया गया है कि जब कोई मर जाता है, पड़ोस वाले मृत व्यक्ति के परिवार कुछ दिन खिलाते हैं। भूख से पीड़ित बालक को इसी प्रथा के कारण बाप के मरने पर दो चार दिन भोजन मिलता है। उसके बाद फिर भूखमरी शुरु हो जाती है। भूख की आँच में उसके मन में माँ की मृत्यु से रोटी मिलने की कल्पना जागती है।

इस प्रवृत्ति को कौन स्वस्थ और सुसंस्कृत कह सकता है? यदि इस प्रवृत्ति के पक्ष में लोग हैं भी तव भी अभी यह प्रवृत्ति भारत के जनमानस में वरीयता बना पायी है। इस प्रवृत्ति की वरीयता तब तक नहीं बन पाएगी जब तक भारत की संस्कृति और धर्म बोध सर्वोपरि बने रहेंगे। यूरंडपंथी हमारी धर्म-संस्कृति के मूल्यों को पिछड़ा मानते हैं, भोगवाद को ही सर्वोपरि मानते हैं मार्क्समार्गी लोगों की धारणा भी इसके निकट है। फिर भी हमारे धर्म वोध में ऐसी जीवनदायी व्यवस्था निहित है कि उसका वर्चस्व बना हुआ हैं।

एक दूसरी प्रवृत्ति भी सामने आई। यह व्यवसाय क्षेत्र की नहीं थी पर आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित अवश्य थी। राजनीतिक सत्ता ने भी गुजरात के भूकम्प का एक उपयोग किया। बजटीय घाटे को ढकने के लिए करों के अतिरिक्त अधिभार की घोषणा में भूकम्प का नाम लिया गया। गुजरात आपदा से पीड़ित भारतीय जनमानस पर इस अंदाज में अधिभार लगाना उचित नहीं था। अपनी कमी ढकने के लिए भूकम्प को बहाना बनाना मार्मिक संदर्भो का गलत उपयोग है। सूचना व्यवसाय तो जनमानस को भाँत-भाँति से पीड़ित कर आह-ओह सुनने में लगा ही हुआ था। टी. वी. स्क्रीन प्रभावकारी दृश्य से कैसे भरे इसके लिए कैमरे वाले जागरूक तो थे ही, राजनीति के सत्ता को इस स्तर तक नहीं जाना चाहिए। यह राजधर्म नहीं है। इसकी अपेक्षा दण्ड सम्भालनेवाले से नहीं की जा सकती। दण्ड तो तमस में रहनेवाली धनार्जन से भौतिक सुख तक जीने वालों पर अंकुश लगाने के लिए होता है। राज धर्म छातें की भांति है जो दूसरों को संरक्षित करता है। तमस से सत्व को जोड़ता है। बौद्धिक मूल्यों को धारण करनेवाले वर्ग और बाजार की तामसिक शक्तियों के बीच संवैधानिक मध्यस्थता करता है। राजनीति का क्षेत्र भी व्यवसाय के मार्ग और भाषा को

पकड़ने लगे तो दु:खद होगा।

तीसरी प्रवृत्ति की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। भूकम्प त्रासदी के समय प्रयाग में महाकुम्भ का पर्व चल रहा है। करोड़ों पुण्यार्थी संगम पर स्नान के लिए आए थे। वहाँ भारत की तपस्वियों की परंपरा एकत्र हुई थी। भूकम्प की त्रासदी से मर्माहत हो महात्माओं ने अपने उत्सव को मौन में बदल दिया। उनका सारा आयोजन भूकम्प की पीड़ा की प्राथमिकता से संवेदित हो उठी। वे लोग गुजरात वासियों के लिए तत्पर हो उठे। यह राष्ट्र की सात्विक शक्ति है। यह अभौतिक ही इसका ध्येय है। सर्वत्याग ही इसका सिंहासन है। इस क्रम में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और विश्व हिन्दू परिषद् के मौन योगदान याद करने योग्य हैं और इसके अतिरिक्त चिंताओं के बीच जीवित बचे लोगों तक के लिए रोटियाँ सेंकनेवाली भावना बेन को भी उस मेनन परिवार के लोगों के साथ जिन्होंने हज की यात्रा रद्द कर 'भूकम्प पीड़ितों' के सहयोग में जुट गये, हमें याद करना चाहिए। ध्वंस से भावविगलित हुए मानस को जब कर्त्तव्य झकझोड़ देता है आँसू हूँकार बन जाते हैं पुनर्सृजन की श्रमधारा फूट निकलती है।

भूकम्प त्रासदी के इस प्रतिबिम्बों को देखने के बाद ऐसा लगता है कि भारतीय परंपरा में जिस 'गुप्तदान' की बात कही गई है वह हजारों वर्ष के अति समृद्धि हमारे समाज के विचारों की एक मणि है। हमारा समाज प्रवृत्तियों के अनुसार विभाजित होकर कर्मक्षेत्र में सक्रिय नहीं होता, हमें सभी प्रकार के जनसमूहों की प्रवृत्तियों की जानकारी नहीं होती तो 'गुप्तदान' का महत्व स्थापित नहीं हुई होती। दान का प्रदर्शन बाजार बन सकता है, सत्ता बन सकता है उसका भौतिक जगत में मूल्य लग सकता है और यहीं से दान के उत्तम उद्देश्य और आदर्श का पतन भी हो सकता है। इसलिए आत्मभाव का उन्नति के लिए दान को छुपाने की व्यवस्था खड़ी हुई। इस परंपरा के आधार पर हमारे देशवासियों में प्रचलित है कि अपनी सेवा का मूल्य हमेशा नहीं लिया जाना चाहिए। अपने को बेंचना श्रेष्ठता नहीं है। इससे कोई आन्तरिक लाभ नहीं होता जिससे आन्तरिक प्रसन्नता प्राप्त नहीं होती है।

यह संयोग था कि राष्ट्र की सात्विक और मूल प्रवृत्ति का पर्व कुम्भ में पुण्य लाभ का विराट आयोजन हो चुका था जिसे देख आज की सूचना युग हतप्रभ हो उठा था और ठीक इस अवसर पर एक गुजरात भूकम्प हुआ। राष्ट्र की मूल शक्ति और प्राकृतिक आपदा का एक साथ मिलने में भारत माता की एकात्मशक्ति प्रकट रूप सामने आया जिसकी जयकार ही हमारी अस्मिता है। ■

(पृष्ठ ३५ का शेष.....)

भूकम्प से संबंधित प्राचीन भारतीय.........

लक्षण है कि भूकम्प वायवीय प्रतिक्रिया का परिणाम था। आग्नेय मण्डल के लक्षक नक्षत्र हैं विशाखा, कृत्तिका, पुष्य, पूर्वाफाल्गुनी, भरणी, एवं पूर्वा भाद्रपद तथा इसका प्रभाव क्षेत्र अश्मक, बंग, वाह्लीक तण, कलि, ब, द्रविड़ एवं शबर देश हैं। बृहस्पति कहते हैं कि आग्नेय मण्डल के भूकम्प का लक्षण यह है कि कम्प के एक सप्ताह के अभ्यंतर यम जिह्वा के समान भयानक देदीप्यमान उल्का (ज्वाला) भूमि से निकलती है, सारी दिशाएँ सूर्योदय के समान अरुण वर्ग की हो जाती हैं। चंद्रमा एवं सूर्य ताम्रवर्ण के दिखाई देते हैं। पशु एवं पक्षी आदि जलने लगते हैं। इन लक्षणों से भूकम्प में अग्नि की कारकता का ज्ञान होता है। इसी प्रकार अन्य मंडलों का भी विस्तृत वर्णन है।

(ग) भूकम्प का पूर्व ज्ञान

ऋषियों ने भूकम्प के पूर्व ज्ञान के विषय में अनेक विधियाँ विकसित की थीं जिसमें मंडल सिद्धांत में विभिन्न मंडल जन्य भूकम्प के ज्ञान के प्राकृतिक लक्षणों के अतिरिक्त अंतरिक्ष में ग्रहों के चार परिपथ पर विशेष परिस्थिति का उत्पन्न होना भी सम्मिलित था। उदाहरण के लिए बृहस्पति के मार्ग में यदि मंद किरण वाले बधु का संक्रमण हो एवं वह बृहस्पति के प्रभाव क्षेत्र में स्वयं निष्प्रभावी हो अर्थात् ज्योतिषीय भाषा में यदि बुध एवं बृहस्पति के ग्रह-युद्ध में बुध पराजित हो तो धरती के जिस भाग में इस ग्रह-युद्ध का सीधा वेध होगा या जो इसका प्रभाव क्षेत्र होगा वहाँ भूकम्प होगा। इस प्रकार के अनेक प्रकरण हैं जिनके विस्तार से अध्ययन की आवश्यकता है।

भूकम्प से संबंधित प्राचीन भारतीय सिद्धांतों का यह संक्षिप्ततम परिचय इस तथ्य का संकेत करने के लिए पर्याप्त है कि प्राचीन भारतीय ऋषिगण की वैज्ञानिक सोच गंभीर एवं सार्वभौमिक थी। साथ ही भूकम्प से संबद्ध प्राचीन भारतीय मान्यताओं का विस्तृत, व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक अध्ययन होने पर मौसम विज्ञान को भूकम्प के विषय में भविष्यवाणी करने के लिए पर्याप्त सामग्री मिल सकती है। ■

सूचना हजारों नियमित ग्राहकों और पाँच लाख से अधिक समर्पित पाठकों की प्रिय स्वदेशी पत्रिका में अपने उत्पादनों, सेवाओं और व्यवसायिक सूचनाओं का विज्ञापन देकर – आशा है, आप पुनीत राष्ट्रीय लक्ष्य को सफल बनाने में अवश्य सहयोगी होंगे।

भवदीय
प्रबंधक
स्वदेशी जागरण प्रकाशन

संपर्क : ६०, नॉर्थ एवेन्यू, नई दिल्ली-११०००१, दूरभाष : ३०१८१७५

Scanned with OKEN Scanner

बाल्को की बलि

■ सुमित मित्तल

टाइम्स ऑफ इंडिया के अनुसार बाल्को की परिसंपत्तियों का मूल्य निर्धारण एक ऐसे विशेषज्ञ ने किया जिसे केवल भूमि एवं भवनों के मूल्य निर्धारण का अधिकार-पत्र प्राप्त है। जिसने अबतक का सबसे बड़ा मूल्य निर्धारण एक १६० करोड़ रुपए के पाँचतारा होटल का किया था। उसके अबतक के अनुभव के कुल २२ परिसंपत्तियों के मूल्य निर्धारण में १५ जमीन से संबंधित है और दो साइकिल कंपनियों का मूल्य निर्धारण भी इस अनुभव में शामिल है।

भारत अल्मुनियम कंपनी लिमिटेड (बाल्को) देश का एक लाभकारी उद्योग माना जाता था। सात हजार कर्मचारियों वाले इस उद्योग ने अभी पिछले वर्ष लगभग ११० करोड़ रुपए का लाभ दिया था। इसका कुल कारोबार ८०० करोड़ रुपए से अधिक का रहा है। बाल्को का ५१ प्रतिशत शेयर मात्र ५५१.५० करोड़ रुपए में स्टार लाइट नाम की एक निजी कंपनी के हाथों बेंच दिया गया। इसी तरह मारुति उद्योग लिमिटेड जैसी सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी भी बिकी, अधिक शेयर खरीदने वाली एक कंपनी के हाथ में प्रबंधन चला जाता है और उसकी इच्छा और हितों का पोषण प्रधानता हो जाती है। वही उस उद्योग का मालिक हो जाता है। सुजुकी नाम की जापानी कंपनी जिस तरह मारुति उद्योग लिमिटेड का मालिक बन गया है, बाल्को का ५१ प्रतिशत शेयर खरीद लेने पर 'स्टार लाइट' इसका मालिक बन चुका है।

बाल्को के श्रमिक संगठनों ने इस बिक्री को आपत्तिजनक बताया है। उनका कहना है कि बाल्को का मूल्य ३९०० करोड़ से कम नहीं आँका जाना चाहिए इसकी ५१% शेयर की कीमत १८०० करोड़ से अधिक होनी चाहिए बाल्को के शेयर की खरीद के लिए छत्तीसगढ़ राज्य के वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री महेंद्र कर्मा द्वारा केंद्रीय विनिवेश मंत्री अरुण शौरी के लिखे एक पत्र का उल्लेख खबरों में आया है इसके अनुसार ज्ञात होता है कि बाल्को का बाजार मूल्य ४०,००० करोड़ रुपए आँका गया था, जबकि अब इसका मूल्य मात्र ४०० करोड़ बताया जा रहा है। श्रीकर्मा के प्रस्ताव को स्वीकृति नहीं मिली।

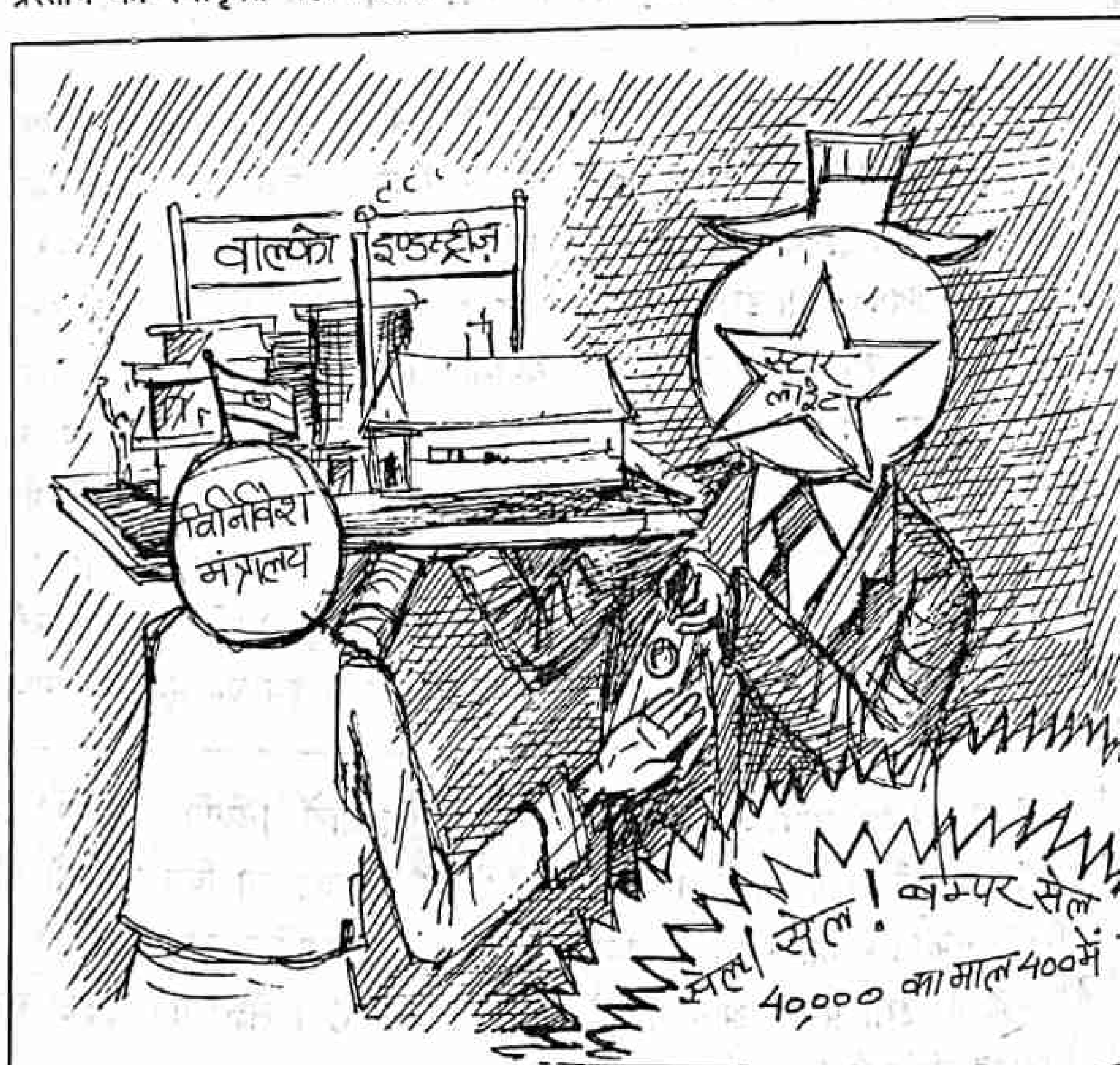

टाइम्स ऑफ इंडिया के अनुसार बाल्को की परिसंपत्तियों का मूल्य निर्धारण एक ऐसे विशेषज्ञ ने किया जिसे केवल भूमि एवं भवनों के मूल्य निर्धारण का अधिकार-पत्र प्राप्त है। जिसने अबतक का सबसे बड़ा मूल्य निर्धारण एक १६० करोड़ रुपए के पाँचतारा होटल का किया था। उसके अबतक के अनुभव के कुल २२ परिसंपत्तियों के मूल्य निर्धारण में १५ जमीन से संबंधित है और दो साइकिल कंपनियों का मूल्य निर्धारण भी इस अनुभव में शामिल है। श्री पी.वी. राव नामक उस व्यक्ति को धात्विक प्रौद्योगिकी के विषय में कोई जानकारी नहीं है। श्री पी.वी. राव का नाम बाल्को के मूल्य निर्धारण के लिए जार्डिन फ्लेमिंग नाम की एक सलाहकार कंपनी ने सुझाया था। बाल्को के मामले के जानकार लोगों के अनुसार इस व्यक्ति का चयन इसलिए किया गया कि यह व्यक्ति सबसे कम पैसे पर मूल्य निर्धारण का काम करने को तैयार था।

राव ने बाल्को का मूल्य निर्धारण करने में ३१ जनवरी से ४ फरवरी तक सिर्फ चार दिन इस उद्योग की मुख्य इकाई कोबरा में दिए और दो दिन आसन सोल में बिताकर अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दिया। राव

का कहना है कि इन परिसंपत्तियों के मूल्य निर्धारण के लिए उन्होंने १० प्रतिशत स्थाई परिसंपत्ति का चयन कर लिया जो ९० प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करती थीं। इस उद्योग के ४६० करोड़ रुपए अधिभार एवं सुरक्षानिधि के विषय में पूछा गया तो राव का उत्तर था, 'ये अप्रासंगिक हैं, हमें केवल स्थाई परिसंपत्ति से मतलब है। और उद्योग के बाजार के हिस्से के विषय उनका उत्तर था '- यह क्या है? यह प्रासंगिक नहीं है।'

बाल्को का बाजार के १५ प्रतिशत पर अधिकार है इसका कुल लाभ ५५.८१ करोड़ है यह १८ करोड़ रुपए का लाभांश देती है २८१.५७ करोड़ कर और ड्यूटीज देती है। ऐसे उद्योग के विषय में श्री राव की उपेक्षापूर्ण टिप्पणी यह सुनी गई कि पाँच तारा होटल में भी वॉयलर और वातानुकूलन यंत्र होते है। विशेषज्ञ बताते है कि बाल्को की तरह की कंपनियों का मूल्य निधारण इतने सस्ते ढंग से नहीं किया जाना चाहिए था। इसका मूल्यांकन बाजार की हिस्सेदारी, उपार्जन की क्षमता और अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता के आधार पर किया जाना चाहिए। बाल्को के ५१ प्रतिशत शेयर को किसी भी निजी कंपनी को बेचना विनिवेश आयोग के उस प्रस्तावों के भी विरुद्ध है, जिसने केवल ४० प्रतिशत शेयर ही बेचने की बात की थी।

बाल्को के शेयर को बेचने के पक्ष में विनिवेश मंत्री अरुण शौरी के तर्क है कि मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ और उड़ीसा के मुख्यमंत्रियों ने विनिवेश में अहम् भूमिका निभाई। बाल्को के शेयर खरीदने के लिए आई निवेदिकाओं में सबसे अधिक मूल्य स्टारलाइट ने दिए। समझौता के अनुसार एक वर्ष तक स्टार लाइट किसी प्रकार का पुनर्गठन और कर्मचारियों की निकासी नहीं करेगा एक वर्ष बाद ये काम हो सकते हैं। स्टार लाइट अल्मुनियम क्षेत्र की बहुत बड़ी कंपनी है। वास्तव में स्टार लाइट के अल्मुनिया का बाजार का सिर्फ ३ प्रतिशत बताया जाता है जबकि हिण्डालको का हिस्सा ४१ प्रतिशत है। इसी प्रकार स्टार लाइट के प्रति जो अन्य पक्षपात दिखाए गए है उन पर आपत्तियाँ हो रही हैं। ■

नारियल के मूल्यों में गिरावट से उत्पादक परेशान

गोवा एवं केरल के नारियल उत्पादक किसान नारियलों की गिरती हुई कीमतों से परेशान है। नारियलों की कीमत ५ रुपए प्रति नारियल से घट कर २ रुपए प्रति नारियल हो गयी है तब भी खरीदार नहीं मिल रहे हैं। नारियल तेल की कीमत भी ६० रुपए प्रति किलो से घट कर ३५ रुपए किलो पर आ गई है। उत्पादकों की हालत यह है कि वे अपना उत्पादन मूल्य भी नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं। गोवा में नारियलों के आकार और गुणवत्ता के आधार पर प्रति हजार १६०० से २८०० रुपए तक कीमत मिल रही है जबकि एक नारियल का उत्पादन मूल्य २.६० रुपए पड़ रहा है। ठीक इसी तरह केरल से प्राप्त रिपोर्ट के अनुसार वहाँ नारियल तेल की कीमत ६० रुपए प्रति किलो से घट कर ३५ रुपए प्रति किलो हो गई है। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार इसका मुख्य कारण मलेशिया से सस्ते पालमोलीन का आयात है। केरल गए दल ने देखा कि नारियल सूख कर पेड़ों पर लटके हुए हैं। लेकिन, किसान उनको उतारने के लिए तैयार नहीं है। गोवा में भाजपा सरकार ने अपने किसानों से नारियल की खरीद बढ़ा दी है और दूसरे राज्यों से आयात होने वाले नारियलों पर शुल्क लगाया है ताकि उसके किसानों को कुछ लाभ हो सकें। कृषि विभाग के अनुसार जून २००० से नारियल की कीमत में भारी कमी हुई है। यह १४०० रुपए प्रति हजार से ११०० रुपए प्रति हजार हो गया है। इसमें किसानों के बीच बेचैनी बढ़ गयी है।

केरल में इसे कल्पवृक्ष कहा जाता है। लेकिन कल्पवृक्ष पर चढ़कर नारियल तोड़ने वाले मजदूर बुरी हालत के बावजूद पेड़ पर चढ़ने की मजदूरी १० रुपए प्रति पेड़ के हिसाब से कम लेने को तैयार नहीं है।

वहाँ के एक किसानों का कहना है कि सोना एवं नारियल ने किसी भी परिस्थिति में हमारा साथ नहीं छोड़ा है। लेकिन, अब विश्वास हिल रहा है। चेट्टीकुलांगर के कुट्टन नायर का कहना है, 'यह क्या हो रहा है? मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।' उनके १५० वृक्षों से प्रत्येक दूसरे माह में १८०० नारियलों का उत्पादन होता है और इस सप्ताह उन्होंने उनका विक्रय ४००० रुपए में किया। जबकि सामान्यत: उन्हें इसका मूल्य ८००० रुपए मिल जाता था और वृक्षों पर चढ़ने वाले को दिए जाने वाले १५०० रुपए को निकाल दे तो उन्हें १८०० नारियलों का कुल मूल्य २५०० रुपए मिला है। इसी में उन्हें खाद, कीटनाशक इत्यादि भी डालने होंगे। यही कहानी तमाम किसानों की है। फिर भी योजना आयोग का दावा है कि नारियल की खेती बढ़ रही है। आयोग के अनुसार १९९५ के ९.८ लाख हेक्टेयर की तुलना में यह खेती अब बढ़कर १० लाख हेक्टेयर से अधिक हो गयी है।

भारतीय रेलवे के कारखानों पर गिद्ध दृष्टि

भारतीय रेलवे की इंजन, कोच और पुर्जे बनाने वाले कारखानों पर विदेशी कंपनियाँ के पंजे कसते जा रहे हैं। चितरंजन के रेलवे कारखाने में बिजली पर चलने वाली इंजन तैयार होती है। यहाँ स्वीडेन की ए.बी.बी. कंपनी पिछले दरवाजे से प्रवेश कर चुकी है। यह विदेशी कंपनी तीन फेसवाली बिजली की रेलवे इंजन के उत्पादन को हथियाना चाह रही है। इसका तर्क है कि भारत की तकनीक सत्तर के दशक की पुरानी है। विश्व की दौड़ में बराबरी के लिए जरूरी हैं इस उत्पादन को ए.बी.बी. अपने हाथ में ले ले। रेलवे बोर्ड इस कंपनी पर मेहरबान है। एशियाई विकास बैंक ए.बी.बी. की वकालत करते हुए दबाव और प्रलोभन तक जाकर उसका पक्ष लेने पर तुला है।

बनारस मडुआ डीह स्थित डीजल रेल इंजन बनाने वाला भारतीय रेलवे के उपक्रम 'डी एल डब्ल्यू' पर अमरीका की बहुचर्चित कंपनी जनरल मोटर्स हाथ फेरने में लगी है। यह कंपनी भी अपनी विकसित तकनीकी से भारतीय रेल का उद्धार करना चाहती है। रेलवे की विभिन्न उत्पादन इकाईयों पर विदेशी कंपनियाँ काबिज होने के प्रयास में लगी हैं। रेल का धुरा और पहिया बनाने वाली बंगलूर का कारखाना हो या कोच और डिब्बे बनाने वाला कपूरथला, (पंजाब) या चेन्नई का कारखाना हो सभी पर विदेशी कंपनियाँ की गिद्ध दृष्टि चुभी हुई है। भारतीय रेल की उत्पादन इकाईयों के निजीकरण का दुष्परिणाम से देश में भारी हाहाकार उत्पन्न होगा। ■

Scanned with OKEN Scanner

सब्जी उत्पादक किसान का आश्चर्यजक कारनामा

■ स्वदेशी पत्रिका संवाद

सरकार के पास खाद्यान्न की उपज बढ़ाने का एकमात्र उपाय है – उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देना। जबकि देशी तकनीक और जैविक उर्वरकों के प्रयोग द्वारा जितनी उपज बढ़ायी जा सकती है और मुनाफा कमाया जा सकता है, उतना रासायनिक उर्वरकों द्वारा की गई कृषि से संभव नहीं है। दूसरे जैविक उर्वरकों और देशी तकनीक के प्रयोग से जमीन का उपजाऊपन बरकरार रहता है.......

हरित क्रांति के नाम पर अधिकाधिक उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देकर जमीन की उपजाऊ क्षमता का विनाश किया गया। आज भी सरकार के पास खाद्यान्न की उपज बढ़ाने का एकमात्र उपाय है – उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देना। जबकि देशी तकनीक और जैविक उर्वरकों के प्रयोग द्वारा जितनी उपज बढ़ायी जा सकती है और मुनाफा कमाया जा सकता है, उतना रासायनिक उर्वरकों द्वारा की गई कृषि से संभव नहीं है। दूसरे जैविक उर्वरकों और देशी तकनीक के प्रयोग से जमीन का उपजाऊपन बरकरार रहता है। इसी देशी तकनीक के सहारे हरियाणा के बादशाहपुर के एक साधारण किसान ओम प्रकाश सैनी ने मात्र छह महीने में एक एकड़ जमीन से १ लाख रुपया कमाया है। दसवीं पास ओमप्रकाश सैनी पिछले दस वर्षों से खेती का कार्य कर रहा है। उसने बताया कि जुलाई के मध्य उसने एक एकड़ खेती में सैंगरी (सींगरी) के साथ-साथ मूली तथा पालक की एक साथ बुआई की। इसके लिए उसने तीन फीट की दूरी पर मेंढ़ बनाई। इन मेंढ़ों के दोनों ओर सैंगरी के बीज बो दिए। साथ ही दो मेंढ़ों के बीच खाली जगह में पालक की बुआई की। चालीस दिन बाद मूली की फसल तैयार होने पर इसे सितंबर माह में ऊँचे दामों पर बेचा गया। मूली की बिक्री का कार्य लगभग बीस दिन चला। इसके बाद पालक की फसल १० सितंबर तक तैयार हो गई तथा इसकी तीन उपज काटी गई। पालक भी सितंबर तथा अक्टूबर के महीने अच्छे भाव पर बिका। २० अक्टूबर तक पालक की फसल चली। इसके बाद १५ नवंबर से मुख्य फसल सैंगरी की तुड़ाई शुरु की जो करीब १५ जनवरी तक चली। ओमप्रकाश का कहना है कि इस प्रकार तीन फसलों से वह करीब एक लाख रुपए तक मुनाफा कमा लेगा।

ओमप्रकाश ने कृषकों का आह्वान किया कि वे अपने खेतों में वैज्ञानिक विधियाँ अपनाने पर बल दें। उन्होंने कहा कि बढ़ रहे शहरीकरण, औद्योगिक करण तथा परिवारों के बँटने के कारण प्रति किसान भूमि का आकार छोटा होता जा रहा है। ऐसे में परिवार के दायित्वों तथा समाज में सम्मानूपर्वक जीवन निर्वाह करने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि भूमि के प्रत्येक हिस्से से भरपूर फसल लेकर अधिकतम मुनाफा सुनिश्चित किया जाए। ऐसे में सघन खेती (एक समय में खेत से एक से ज्यादा फसल उगाना) तथा रिले क्रापिंग अपनाना अत्यंत आवश्यक है। ओमप्रकाश ने कहा है कि वे सब्जियों में खरपतवार नियंत्रण के लिए स्टांप का प्रयोग कर रहे हैं लेकिन इसके इस्तेमाल का उनका अपना ही तरीका है। सब्जियों की बुआई के बाद इसके इस्तेमाल का उनका अपना ही तरीका है। सब्जियों की बुआई के बाद हल्की सिंचाई करके स्टांप का छिड़काव करते हैं जिससे खरपतवार बिल्कुल नहीं होता। उन्होंने अपने खेतों में दीमक का प्रकोप कम करने के लिए खेत की मेढ़ों पर नीम का वृक्षारोपण किया है जिससे खेतों में बिना कोई रसायन का प्रयोग किए दीमक के प्रकोप में कमी हुई है। ओमप्रकाश का कहना है कि वे सब्जियों की खेती में बुआई करते समय रासायनिक खाद बिल्कुल प्रयोग नहीं करते। केवल गोबर का सड़ा खाद प्रयोग करते हैं। ऐसा करने से खेतों की उर्वरा शक्ति की बढ़ोतरी के साथ-साथ मिट्टी की जल धारणा क्षमता में वृद्धि होती है तथा जल्दी-जल्दी सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती। उनका यह भी कहना है कि वे बाजार में ऊँचे भाव मिलने के संभावित समय को ध्यान में रखकर ही सब्जियों तथा उनकी किस्मों का चुनाव करते हैं। साथ ही उच्च गुणवत्ता बीजों पर ही विश्वास करते हैं। इसके लिए उन्हें चाहे कहीं भी जाना पड़े और कितना ही पैसा खर्च करना पड़े।

ओमप्रकाश ने बताया कि सब्जी की खेती से भरपूर उत्पादन प्राप्त करने में उन्हें कई समस्याओं का सामना भी करना पड़ा। उन्होंने बताया कि फसल को कीड़ों व बीमारियों से बचाने के लिए बाजार में उपलब्ध रासायनों की विश्वसनीयता नहीं के बराबर है। आजकल बाजार में ऐसी-ऐसी दवा आ रही हैं जो कीड़ों व बीमारियों पर असर नहीं करती हैं। साथ ही यह जानकारी भी आवश्यक है कि किस दवा की कितनी मात्रा फसल की किस अवस्था पर प्रयोग की जाए। सब्जियों की खेती में दवाओं के इस्तेमाल के समय यह भी ध्यान रखा जाए कि उनका मनुष्य के शरीर पर हानिकारक प्रभाव न पड़े। ओमप्रकाश ने बताया कि इस संबंध में विस्तृत जानकारी उन्हें कृषि विज्ञान केंद्र के कृषि वैज्ञानिकों से प्राप्त हुई। उन्होंने केंद्र से दो सप्ताह का प्रशिक्षण भी प्राप्त किया। उनकी अन्य सब्जी उत्पादकों को भी सलाह है कि वे भी कृषि विज्ञान केंद्र शिकोहपुर से प्रशिक्षण लें तथा समय-समय पर आने वाली कठिनाईयों के संबंध में कृषि वैज्ञानिकों से संपर्क करते रहें।

कृषि विज्ञान केंद्र शिकोहपुर के डॉ. ... के अनुसार सब्जी उत्पाद कृषकों के लिए सब्जियों में फसल सुरक्षा के उपाय, संबंधित उपकरणों के सुरक्षित प्रयोग, रखरखाव तथा मरम्मत के लिए १५ दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। प्रशिक्षण में कृषकों को सब्जी की विभिन्न फसलों में सुरक्षित दवाओं के प्रयोग, विभिन्न रासायनों की पहचान, छिड़काव की विधि आदि के बारे में दक्ष किया गया ... खेतों में फसल सुरक्षा उपाय के साथ गाँव के अन्य किसानों को भी सेवाएँ उपलब्ध करा ... इससे निश्चित रूप से क्षेत्र के किसान लाभान्वित होंगे। ओमप्रकाश जैसे प्रगतिशील सफल कृषक से प्रेरणा पाकर लघु कृषक अपनी थोड़ी जमीन में भरपूर उत्पादन प्राप्त करके अधिक मुनाफा कमा सकते हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों के चहुँमुखी विकास में अपना सक्रिय योगदान दे सकते हैं।

खुली जीप में छैंया-छैंया गर्ल

नफासत और तहजीब के उस महानगर में कोला और कारें अभी बहनी शुरू ही हुई थीं। अट्टालिकाएं सिर्फ श्रेष्ठिपुत्रों की नहीं थीं। अनेकानेक स्वामधन्य सेवक थे, जिन्होंने सेवा के बदले प्रचुर मेवा एकत्र किया था। नित नये व्यवसाय चलन में आ चुके थे। सर्वाधिक प्रचलन में था क्रय-विक्रय। जिसके पास जो भी था, उसे उचित मूल्य पर बेचकर नातिदीर्घ समय में वह श्रीमन्त बनने के मार्ग पर था। विद्या, शक्ति, सत्ता, सौन्दर्य, स्वप्न, कामना, लालसा, देह, अनेकानेक पदार्थ थे जो विक्रय के लिए सहज उपलब्ध थे। कुछ लोग बेच रहे थे, कुछ बेचने का यत्न कर रहे थे और कुछ आशा में थे। जो लोग सफलता का रसपान कर चुके थे और आगे निकल चुके थे वे पीछे आने वालों के लिए ईर्ष्या और प्रेरणा के स्रोत थे।

ऐसे महान सांस्कृतिक समय में 'छैंया-छैंया गर्ल' खुली जीप में नगर के प्रशस्त मार्ग पर निकलीं। माथे पर पसीने के मोती झलकने लगे। मार्ग में स्थान-स्थान पर 'इसे भी आजमा कर देखो' वाली पीढ़ी के युवाओं को हल्लो-हाय कहती वे गंतव्य तक पहुंचीं। वहां बच्चों ने उनसे आटोग्राफ प्राप्त किए और भविष्य के लिए प्रेरणारूपी पाथेय भी। नीलहरित पृष्ठभूमि में देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली आधुनिक हिन्दी में शब्द उत्कीर्ण थे 'बॉय फ्रेण्ड से बेहतर। मौसम के साथ रंग नहीं बदलता। घर लाने पर पापा नाराज नहीं होते। मेरा वजन बढ़ने से भी इसे कुछ फर्क नहीं पड़ता। अगले साल भी मेरे साथ रहेगा।' किसी युवा सुंदरी के श्रीमुख से ये पवित्र शब्द सुनना एक अनुपम अनुभव था। शब्द सगर्भ थे, आशय और इंगित दबे-दबे से थे लेकिन संदेश साफ था। सुषुप्त कामनाओं को निशाना बनाकर मदन-शर फेंके जा रहे थे। क्रेता धड़ाधड़ घायल होकर गिर रहे थे। विक्रय का ग्राफ सतत ऊपर की ओर जा रहा था। खरीददार पंक्तिबद्ध और प्रतीक्षा में थे। इस दुर्लभ अवसर को महान बनाने के लिए तत्पर थे। जीवन को एक लक्ष्य मिल चुका था। बहाना भी। छैंया-छैंया गर्ल ने उन्हें क्रमशः 'स्कूटी' की चाबियाँ सौंपी। यह स्कूटर नामक वाहन का अवतार भर नहीं था। स्कूटी नारी विमुक्ति आंदोलन जैसा था। इसी बहाने उनके मन में संकल्प आकार ले रहा था, कुछ कर दिखाना है।'

यह नब्बे का दशक नहीं था जब एक साफ-सुथरे विचार के सहारे किसी माल की बिक्री तीस फीसदी तक बढ़ायी जा सकती थी। यहाँ किसी भी तरह सेकेंड चांस की गुंजाइश नहीं थी। या तो बेचना था या खुद बिक जाना था। युद्ध और प्रेम वाले मुहावरे में तीसरी चीज जुड़ चुकी थी – विज्ञापन। विज्ञापन में सब जायज है। टी.वी. से अनवरत झरते तीन हजार विज्ञापनों में पहचान बनानी थी। 'कुछ भी करो लेकिन बेचो' ही श्रेय था। विज्ञापन मीडिया का अनुकरण कर रहे थे। उसी तरह जैसे कालिदास के वर्णन में राजा दिलीप नंदिनी गाय का अनुसरण करते थे। नंदिनी के बैठ जाने पर बैठ जाएं, चलने पर चलें। नंदिनी दुधारू गाय ही नहीं लाभ का एकमात्र स्रोत थी।

यह नब्बे का दशक नहीं था जब एक साफ-सुथरे विचार के सहारे किसी माल की बिक्री तीस फीसदी तक बढ़ायी जा सकती थी। यहाँ किसी भी तरह सेकेंड चांस की गुंजाइश नहीं थी। या तो बेचना था या खुद बिक जाना था। युद्ध और प्रेम वाले मुहावरे में तीसरी चीज जुड़ चुकी थी – विज्ञापन। विज्ञापन में सब जायज है। टी.वी. से अनवरत झरते तीन हजार विज्ञापनों में पहचान बनानी थी।

दैनिक पत्र, पत्रिकाएं अपने नगर संस्करणों के साप्ताहिक रंगीन पन्नों, चिकने कागजों में 'क्या आपके पति आपको संतुष्ट करते हैं?' 'वह मिली उससे पहले, 'कैसे पटायें' जैसे शीर्षक और विषय पर ललित सामग्री परोस रहे थे। राजनीतिक रूप से सही परीकथाएं बिना किसी उथल-पुथल के शांति से चल रही थीं क्योंकि इससे सबकुछ सुरक्षित था। किसी को कोई खतरा नहीं था। कथाएं सुनाने वाले भी, सुनने वाले भी चैन से अपने-अपने कार्य में लगे हुए थे। प्यार-मोहब्बत बेचने में किसी को क्या आपत्ति होगी भला? कुछ प्रभावशाली छवियों वाले लोग प्यार-मोहब्बत को इतने लुभावने तरीकों से पेश कर रहे थे कि उनकी सर्वत्र प्रशंसा हो रही थी। कुछ असंतुष्ट प्रवृत्ति के लोग भी थे जो प्रायः सदैव असंतुष्ट रहते थे, यह उनका स्थायी भाव था। वे बीच-बीच में बेसुरी रागिनियाँ छेड़ रहे थे तथा उन पर कोई कान नहीं दे रहा था। मनोरंजन का अर्थशास्त्र जीवन को बदल रहा था। विचार नहीं वस्तुएं भी अग्निपर्यन्त धूम की तरह व्याप्त थीं।

जो चतुर थे, नीति निपुण थे वे संगठन, ज्ञान, तकनीक और नारों से लैस होकर विश्वविजय करते घूम रहे थे। दुनिया को निजी उद्यम के भाव से चला रहे थे। धरती का शांतिपूर्ण बंटवारा हो चुका था। शूच्याग्र के लिए महाभारत अब दूरदर्शन और फिल्मी संतों के हवाले था। संत मुखपृष्ठ और टीवी के पर्दों पर विराजमान थे। बहुत हुआ तो भक्तों के अनुरोध पर साज-बाज सहित विशाल पंडालों में दर्शन देते थे और यथेष्ठ दक्षिणा ग्रहण कर कृतार्थ करते थे। क्षण-क्षण नए रंग नयी उत्तेजना के साथ नयी कथाएं परोसी जा रही थीं। दरअसल वे मिलजुलकर कामनाओं का साम्राज्य चला रहे थे। कामनाएं जागृत करो, माल बेचो, मुनाफा कमाओ : यही त्रिरत्न थे। छैंया-छैंया गर्ल बहाना थी। उनकी परंपरा में अभी और भी कड़ियाँ आ रही थीं और निरंतरता बनी रहती थी। छैंया-छैंया गर्ल को इससे अंतर नहीं पड़ता था कि वे बॉयफ्रेंड बेच रही हैं या स्कूटी। ■

Scanned with OKEN Scanner

जानलेवा है प्लास्टिक का चलन

■ हितेश शंकर

प्लास्टिक और उससे बनाई गई थैलियों के प्रसार पर रोकथाम सरकारी प्रयास अब तेज हो गए हैं। पॉलिथिन पर रोक लगाना यकीनन अच्छा है, परन्तु निश्चित ही यह अच्छा काम आसान नहीं है और इसका कारण है सशक्त 'प्लास्टिक लॉबी'।

पिछले कुछ समय से स्वास्थ्य तथा पर्यावरण सुरक्षा का मुद्दा गर्माया हुआ है। पर्यावरण रक्षा में जुटे गैर सरकारी संगठन महानगरीय प्रदूषण के प्रति पहले की अपेक्षा अब और ज्यादा मुखर हुए हैं। लोगों में पर्यावरण रक्षा के प्रति बढ़ती जागरुकता और इस विषय में न्यायपालिका की चिंता से उपजे निर्देशों ने शासन को इस दिशा में सोचने पर मजबूर कर दिया है। विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा पुर्नचक्रित पॉलिथिन को प्रतिबंधित करने की कवायदों को इसी श्रंखला की एक कड़ी के रूप में लिया जा सकता है।

प्लास्टिक और उससे बनाई गई थैलियों के प्रसार पर रोकथाम सरकारी प्रयास अब तेज हो गए हैं। पॉलिथिन पर रोक लगाना यकीनन अच्छा है, परन्तु निश्चित ही यह अच्छा काम आसान नहीं है और इसका कारण है सशक्त 'प्लास्टिक लॉबी'।

जहां एक ओर सरकार पॉलिथिन के प्रयोग को हतोत्साहित करने और पुनर्चक्रित पॉलिथिन को प्रतिबँधित करने का प्रयास कर रही है वहीं दूसरी ओर प्लास्टिक उद्योगपतियों की लॉबी सरकार ने इस कदम को लघु उद्योगपतियों को उजाड़ने वाला कदम बताकर इस प्रयास की राह में अडंगे डालने का प्रयास कर रही है। पॉलिथिन के घातक प्रभाव अब संदेह और बहस दोनों से परे की चीज है। अब तक हुए तमाम शोध और परीक्षणों से पॉलिथिन के दुष्प्रभाव सिद्ध हो गए है।

यह नष्ट न हो सकने वाला कचरा मात्र नहीं है बल्कि इसमें नुकसान इससे भी कहीं ज्यादा हैं, यह लोगों को नपुसक बना सकता है या उनमें अन्य यौन विकृतियां पैदा कर सकता है।

वैज्ञानिकों के चूहों पर किए अध्ययन में पॉलिथिन के इन दुष्प्रभावों की पुष्टि की है, मनुष्यों पर इसी दिशा में शोध जारी है। पॉलिथिन को घातक बनाते हैं, उसके निर्माण में प्रयुक्त होने वाले विषैले रसायन तथा पिगमेंट।

वाशिंगटन स्थित 'नेशनल इन्वायरमेंट ट्रस्ट के अध्यक्ष के अनुसार यदि गरम खाद्य पदार्थ को पालिथिन की थैली में रखा जाए तो उनससे एक विषैला रसायन निकलता है। जिसे बिसफिनाईर्ल ए (बीपीए) के नाम से जाना जाता है। यह रसायन खाद्य पदार्थ में मिल जाता है। इस पदार्थ का प्रयोग पॉलिथिन को पारदर्शी बनाने के लिऐ किया जाता है। फूड ग्रेड पैकेजिंग खासकर बच्चों के आहार की पैकेजिंग में इसका प्रयोग अधिक होता है। भोजन यथा फास्ट पूड इत्यादि बेचने में प्रयुक्त होने वाला प्लास्टिक इस पदार्थ से युक्त होता है।

अध्ययन के अनुसार 'बीपीए' अंतस्रावी ग्रंथि के कार्य को बाधित करता है। बीपीए युक्त खाद्य पदार्थ खाने पर यह शरीर में जमा हो जाता है और लैंगिक विकास पर प्रतिकूल असर डालता है। इसका प्रभाव इतना अधिक घातक होता है कि यह भ्रूण अवस्था से लेकर वयस्क व्यक्ति तक ... अपने विष से प्रभावित कर सकता है नेशनल इन्वायरमेन्ट ट्रस्ट के अध्यक्ष फिलिप ... क्लैप के अनुसार "बीपीए बच्चों के हारमोन... (हारमोन से होने वाले) विकास को बाधि... और प्रभावित करता है।"

जापानी वैज्ञानिकों ने भी बीपीए ... केन्द्र में रख पॉलिथिन पर एक अध्यय... किया जापानी वैज्ञानिकों के अनुसार ... डिग्री सेल्सियस तापमान पर रिसकर बीपी... खाद्य पदार्थ में मिलना आरंभ कर देता है। गौरतलब है कि यूरोपीय संघ ने अपने या... पॉलिथिन और प्लास्टिक के अन्य रूपों ... प्रतिबंधित किया हुआ है।

अमेरिका के मिसौटी विश्वविद्याल... में बीपीए पर वैज्ञानिकों को एक दल शोध... रहा है। इन वैज्ञानिकों ने मादा चूहों ... इसका प्रयोग किया, इस प्रयोग के नती... बीपीए के दुष्प्रभावों की ओर स्पष्ट इं... कर रहे थे। मादा चूहों ने अत्यंत कमज... बच्चों को जन्म दिया और उनकी जनेंद्र... अविकसित पाई गई।

हालांकि फिलहाल मनुष्यों पर ... प्रकार का कोई प्रयोग नहीं किया गया ... लेकिन इन शोधरत वैज्ञानिकों का दावा ... कि यह मनुष्यों के लिए भी उतना ... घातक है जितना कि चूहों के लि... वैज्ञानिकों के ही अनुसार पॉलिथिन ... थैलियों को मुलायम बनाने के लिए प्रयु... होने वाले रसायन फथालैट्स से भी श... में यौन विकृतियाँ पैदा होती हैं। बी... और फथालैट्स ही पॉलिथिन निर्माण ... प्रयुक्त होने वाले घातक पदार्थ नहीं ... पॉलीविनायल क्लोरायड, कैडमियम, ... लैड, पॉलीइथीन, प्रापीपोपलीन, मिथा... मिथेक्रिमेट, आक्टाइल थैलेट इत्यादि ... प्लास्टिक पॉलिथिन निर्माण पदार्थों

सूची और भी लम्बी है। इन पदार्थों से कैंसर, गुर्दे और फेफड़ों संबंधित बीमारियां होती हैं। पॉलिथन जलाने पर भी विषैली गैसे उत्सर्जित करता है जिनसे दम घुटने का खतरा रहता है। पालिथिन के इन समस्त दुष्प्रभावों के संदर्भ में देखें तो लोगों में पॉलिथिन विरोध की जागरूकता तथा पुनचक्रित पॉलिथिन को प्रतिबंधित करने के सरकारी प्रयासों का उद्देश्य सहज ही स्पष्ट हो जाता है।

भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा जारी निर्देशों को आधार बना कर ही विभिन्न राज्य सरकारें इस संबंध में नीति और नियमों का निर्माण कर रही है उत्तर प्रदेश सरकार ने गत जुलाई माह में एक अध्यादेश जारी करके २० माइक्रोन से कम मोटाई वाली पॉलिथिन और रिसाइकल्ड पॉलिथिन पर प्रतिबन्ध लगाने का फैसला किया था। इसके लिए सरकार ने राज्य विधानसभा में उत्तर प्रदेश प्लास्टिक और अन्य जीव अवांक्षीत कूड़ा कचरा (उपयोग व निस्तारण विनियमन) अध्यादेश २००० पारित करवाया। इस कानून का उल्लंघन करने वालों के लिए दण्ड की व्यवस्था करते हुए निर्देश दिये गए थे 'इसके अनुसार पहली बार दोषी सिद्ध होने पर एक महीने का कारावास या ५०००/- (पांच हजार रुपये) जुर्माना अथवा दोनों ही दण्ड एक साथ देने को कहा गया था। दोबारा दोषी पाये जाने वाले व्यक्ति को और अधिक कड़े दण्ड का प्रावधान इस अध्यादेश में था।

दिल्ली और राजस्थान की सरकारें भी इस दिशा में पहल कर चुकी हैं, परन्तु यह एक ज्ञात तथ्य है कि सरकारी प्रयासों की सार्थकता जन सहयोग के बिना अधूरी ही होती है। प्लास्टिक लॉबी और सरकारी प्रतिबंध की रस्साकशी इस का भाग्य निर्धारण यकीनन उपभोक्ता ही करेंगे। सरकार और नियम तो उपकरण और माध्यम भर है। ■

भूकंप की भी मार्केटिंग

■ आलोक पुराणिक

हे ईश्वर, तूने दिल दहला देने वाला प्राकृतिक प्रकोप गुजरात के प्राणियों पर ढाया है, अब तू ही इतनी शक्ति दें, जो हर प्राणी इस विपदा से उबर सकें।

विश्व की सबसे बड़ी सिल्क साड़ियों की स्टाक क्लियरेंस सेल जोकि २८ जनवरी को गुजरात में लगायी जानी थी, अब यह स्टाक क्लियरेंस सेल नार्थ इंडिया में एक साथ १४ शहरों में लगायी गयी है। सिल्क साड़ियाँ के एक लाख से अधिक डिजाइन यहाँ उपलब्ध हैं। सभी कलात्मक साड़ियों का एक ही मूल्य सिर्फ २५० रुपए। ३१ जनवरी, २००१ के एक समाचार पत्र के पहले पेज का यह विज्ञापन एक साथ इश्वर से प्रार्थना भी कर रहा है। हाल में गुजरात में आए भूकंप का एक आयाम यह है कि कई कारोबारियों और कंपनियों को अपनी मार्केटिंग के लिए नया मुद्दा मिल गया है। ज्यादा पुरानी बात नहीं है, कारगिल के युद्ध के समय यह साफ हुआ था कि सजग मार्केटिंग के तहत किस तरह से एक त्रासदी का इस्तेमाल किया जा सकता है।

वस्तुत: मार्केटिंग का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह होता है कि किस तरह से मानवीय मनोभावों का इस्तेमाल बेहतर मार्केटिंग के लिए किया जाए। मनोभावों का सहलाना, उन्हें उभारना मार्केटिंग की रणनीतियों का अंग रहा है। गौरतलब है कि कुछ समय पहले सफोला का विज्ञापन बहुत हिट रहा था। इस विज्ञापन में डर का बखूबी इस्तेमाल किया गया था। एक मरीज को आपरेशन के लिए ले जाया जा रहा था, उसके पीछे उसके चिंतित परिजन दिखायी गए थे। कुल मिलाकर संदेश यह था कि जो पत्नियाँ अपने पति की सहेत के लिए चिंतित रहती हैं, उन्हें सफोला का इस्तेमाल करना चाहिए। ओनिडा टीवी की सफल मार्केटिंग का आधार उसका वह विज्ञापन था, जिसमें ईर्ष्या मनोभाव का जोरदार इस्तेमाल किया गया था।

करुणा भी एक महत्वपूर्ण मनोभाव है। इसका इस्तेमाल पहले भी किया जाता रहा है। तमाम कंपनियाँ इस आशय के बयान देती है कि उनकी कमाई का एक हिस्सा कैंसर पीड़ितों की मदद के लिए, अनाथ बच्चों की मदद के लिए प्रयुक्त होता है। कुछ कंपनियाँ बताती है कि उनकी आय का एक हिस्सा पर्यावरण संरक्षण से जुड़ी गतिविधियों के लिए प्रयुक्त होता है।

भूकम्प का मार्केटिंग में इस्तेमाल किस तरह से किया जा सकता है, यह बात तो ऊपर बताए गए एक विज्ञापन से साफ हो जाती है। आने वाले दिनों में इस तरह के कई विज्ञापन दिखायी पड़ सकते हैं। तमाम कंपनियाँ जो भी योगदान भूकम्प राहत में करेंगी, उसका प्रचार किए बगैर वे नहीं रह सकतीं।

कंपनियाँ सामाजिक जिम्मेदारी के तहत राष्ट्रीय आपदा में अपना योगदान करें, यह बात वांछनीय है, सराहनीय भी है। सामाजिक जिम्मेदारी का मतलब यही है कि जिस समाज और राष्ट्र में रहते हैं, उसके प्रति सबका एक न्यूनतम दायित्व बनता है। जिस समाज में, जिस देश में कोई कारोबार संभव हो पाता है, उसके प्रति कृतज्ञता का भाव तो होना ही चाहिए। इसलिए कंपनियों से यह उम्मीद स्वाभाविक ही है कि वे राष्ट्रीय आपदा के इन क्षणों में आगे आकर मदद करेंगी।

पर किसी त्रासदी का मार्केटिंग के लिए अनुचित तरह से दुरुपयोग हो, यह वांछनीय नहीं है। ऐसा नहीं लगना चाहिए कि एक आपदा को कारोबारी तौर पर भुनाया जा रहा है। कारगिल युद्ध के मौके पर ऐसा देखा गया था। यह सब मानवीय संवेदना और गरिमा के अनुकूल नहीं है। दान देने के पुराने नियमों में से एक है कि एक हाथ से दी गयी रकम का पता दूसरे हाथ को नहीं लगना चाहिए। इसी में दान की गरिमा है। कंपनियाँ अगर अपनी सामाजिक जिम्मेदारी को इतनी शालीनता और गरिमा से निभा पाएं, तो श्रेष्ठ है। वरना उनसे उम्मीद तो की ही जा सकती है कि भूकम्प की मार्केटिंग में वे न्यूनतम शालीनता तो बरतेंगी। ■

Scanned with OKEN Scanner

सत्ता बदलने का अमरीकी साइंस

अमरीका द्वारा प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के कारण ही युगोस्लाविया के शास स्लोबोदान मिलोसेविच को गद्दी छोड़नी पड़ी। अमरीकी काँग्रेस की आर्थि सहायता से चलने वाला संगठन 'यू.एस. इंस्टीट्यूट ऑफ पीस' की पत्रि 'पीसवॉच' में प्रकाशित एक लेख के अनुसार अमरीका ने तानाशाहों का तख्त पलटने के लिए विश्वभर में न सिर्फ शक्तिशाली सशस्त्र बल तैनात कर रखे हैं बल्कि तख्तापलट के लिए कार्यकर्ताओं को 'अहिंसक आंदोलन' का प्रशिक्षण देने का सिलसिला भी जारी रखा है। पत्रिका के अनुसार वाशिंगटन आधारि 'इंटरनेशनल रिपब्लिकन इंस्टीट्यूट' नामक एक गैर सरकारी संगठन ने सर्बिया में राजनीतिक पार्टियाँ बनाने की जिम्मेदारी निभाई और इन पार्टियों को 'अहिंसक आंदोलन' चलाने का प्रशिक्षण दिया। ■

निजीकरण से आरक्षण आहत

दिल्ली सरकार एससीएसटी, ओबीसी, कर्मचारी परिसंघ द्वारा आयोजित सम्मेलन में वक्ताओं ने कहा कि निजीकरण के बहाने संविधान प्रदत्त आरक्षण के अधिकार को छीनने की कोशिश की जा रही है। दलित कर्मचारी संगठित संघर्ष के द्वारा ही सुनियोजित साजिश का मुकाबला कर सकते हैं साथ ही विभिन्न सरकारी कार्यालयों में दलित और ओबीसी कर्मचारियों के खिलाफ किए जा रहे अन्याय को भी संगठित होकर ही रोका जा सकता है। राज्यसभा सांसद धर्मबीरु, मंते ने कहा कि दलित समाज के सामने सबसे बड़ा खतरा निजीकरण का है। केंद्र सरकार एक सुनियोजित साजिश के तहत उदारीकरण, निजीकरण और पूंजी निवेश के बहाने पिछले दरवाजे से बहुजन समाज के आरक्षण को छीनने की कोशिश कर रही है। उन्होंने कहा कि समाज के कमजोर और दलित वर्ग के सामने आजादी के बाद यह सबसे बड़ी चुनौती है। ■

कुकुरमुत्ता को सोमलता बता रहे हैं अमरीकी वैज्ञानिक

भारत के वैदिक साहित्य में वर्णित सोमलता को अमरीकी वैज्ञानिकों ने खो निकालने का दावा ठोक दिया था। सोमलता के रस से सुप्रसिद्ध दैवीय पेय सोम निकलने का उल्लेख मिलता है जिसके अभूतपूर्व औषधीय गुण और शक्ति भुनाने के प्रयास में अमरीकी वैज्ञानिकों ने अमानिता मस्कैटिया नामक कुकुर को सोमलता घोषित कर दिया। भारतीय वैज्ञानिकों के एक दल ने अमरी वैज्ञानिकों के इस खोज को चुनौती दी है। उड़ीसा गवर्नमेंट साइंस कालेज वनस्पतिशास्त्र के डॉ. एस.एन. पाढी ने दिल्ली में आयोजित एक संगोष्ठी अमरीकी वैज्ञानिकों के इस वंचनापूर्ण खोज का पोल खोला।

Scanned with OKEN Scanner

बुढ़ापे का अमरीकी इलाज

आयु का वेद-आयुर्वेद की चाह में अमरीका लालायित हो रहा है। इससे भारत में भी जड़ी-बूटियों का भाव गरमाने जा रहा है। आयुर्वेद की एक चिकित्सा पद्धति ऐसी है जिसे कायाकल्प कहते हैं, कायाकल्प से बुढ़ा व्यक्ति रोगमुक्त होकर पुनः युवा की भांति कार्य कर सकता है। आयुर्वेद ने दीर्घायु होने का मार्ग भी बता रखा। ये सारी पद्धतियाँ अमरीका को चाहिए। लेकिन दूसरी ओर एक कार्यक्रम और चल रहा है। अमरीका ने भी भारत में प्रचलित एलोपैथी चिकित्सा के क्षेत्र में अपनी खोजे बेंचने की तैयारी कर रहा है।

अमरीका भारत के एलोपैथी चिकित्सकों (डॉक्टरों) को बुढ़ापे में होने वाले रोगों (जेरेटिक्स) के इलाज की शिक्षा देने के लिए सुविधाएँ देने जा रहा है। बुजुर्गों की चिकित्सा के लिए जेरेटिक्स का जैसा विकास अमरीका ने कर रखी है, भारत में नहीं है। यहाँ तो सभी उम्र के लोगों की चिकित्सा समान तरह से होती है। इस पिछड़ेपन को अमरीका दूर करेगा इसके लिए वह मिसीगन, इंडान, टैक्सास और अर्कसास के विश्वविद्यालयों में भारतीय चिकित्सकों को विशेष प्रशिक्षण देने वाला है। वृद्ध-उपचार की इस कृपा के लिए केंद्र सरकार कृतज्ञ क्यों नहीं होगी।

जेरेटिक्स सोसाइटी ऑफ इंडिया के प्रतिनिधियों सहित अमरीका के एक दर्जन जेरेटिक्स विशेषज्ञ डॉक्टरों ने दिल्ली स्थिति अस्पताल में आयोजित एक संगोष्ठी में भाग

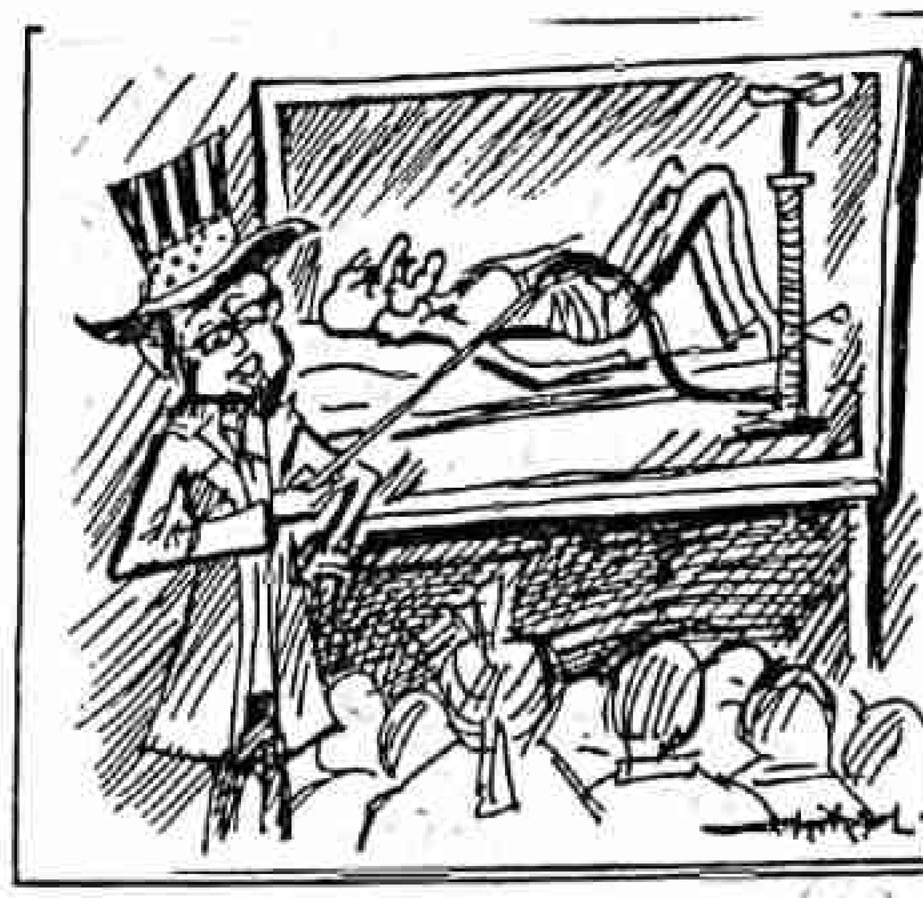

लिया। इसमें 'जेरेटिक्स' की विकसित पद्धति को अमरीका से जानने की उत्सुकता भी उभर कर सामने आई। यह आदान-प्रदान भारत को क्या सचमुच अपनी चिकित्सा पद्धति विकसित करने में मददगार होगा? या आयु का वेद उन्हें सौंप भारत उनके लिए बाजार बनेगा? ■

नकली तस्सर की तस्करी

विदेशों में तैयार हो रहे नकली तस्सर (रेशम) के धागों की बड़ी मात्रा में हो रही तस्करी से असली देशी तस्सर का उत्पादन बर्बादी के कगार पर पहुँच चुका है।

पिछले आठ-दस साल से तस्करों द्वारा नेपाल और बंगलादेश से फारबीसगंज, पुर्णिया कटिहार होते हुए नकली तस्सर के धागे भागलपुर (बिहार) और अब नए प्रांत झारखण्ड के साहिब गंज के निकट भगइया नामक गाँव में पहुँचाया जा रहा है। ये क्षेत्र रेशमी कपड़े बनाने लिए प्रसिद्ध है। लगभग दस हजार हेडलूम भगइया में चलते हैं इस प्रकार यहाँ के अन्यों स्थानों पर भी रेशमी वस्त्रों के काम होते हैं।

इन स्थानों पर पहले असली देशी तस्सर के रेशमी धागों से कपड़े की बुनाई होती थी। देशी तस्सर की यह विशेषता है कि इसके कपड़े जाड़े और गर्मी दोनों मौसमों में सुखद होते हैं। देशी तस्सर अपनी गुणवत्ता के लिए जाना जाता है इसके उत्पादन से हजारों लोगों की रोजी-रोटी चलती रही है।

एक ओर देशी तस्सर के लुप्त हो जाने का खतरा है और दूसरी ओर बढ़ती बेरोजगारी से अपराध, शोषण-संत्रास बढ़ते जाने से उत्पन्न होती सामाजिक विकृतियाँ बढ़ती जा रही हैं।

यदि विदेश से आ रहे नकली तस्सर की तस्करी रोक दी जाती है तो असली देशी तस्सर का उत्पादन और तस्सर के कपड़े की बुनाई हो सकती है साथ ही हजारों लोगों के रोजगार की समस्या हल हो सकता है, गाँव के लोगों का बाहर में हो रहा पलायन रुक सकता है।

बिहार की पुलिस और केंद्र के कस्टम अधिकारी इस तस्करी से अनजान नहीं हैं। सुना जाता है कि इन हुकुमरानों के पैसे बँधे हुए हैं इनके छापे तो पड़ते हैं पर इस पुलिसिया छापे से नोट छप जाता है और मामला ज्यों का त्यों पड़ा रहता है। ■

Scanned with OKEN Scanner

कीड़े उत्साहित होते हैं रॉक और जॉज संगीत से

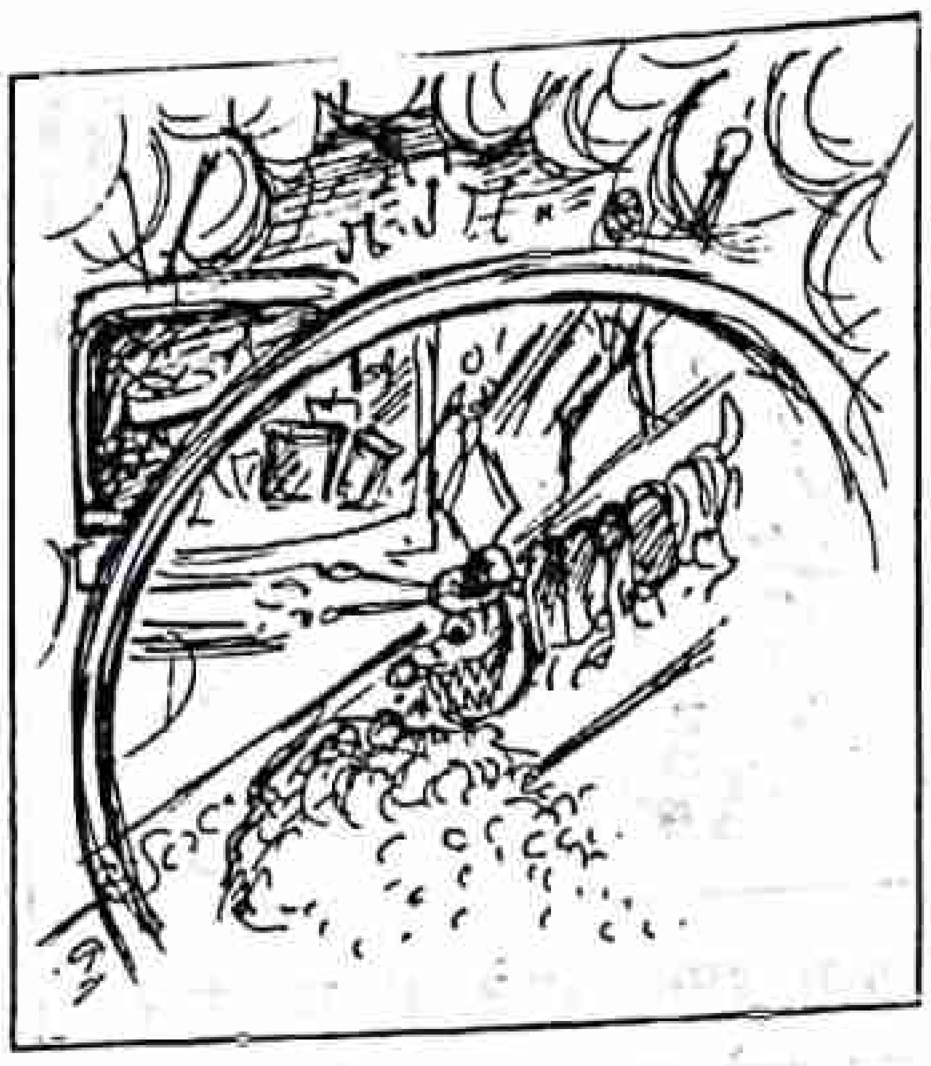

१९ फरवरी को रेडियो के एफ.एम. एक चैनल पर नए वैज्ञानिक शोधों के विषय में दी जा रही जानकारी से एक अद्भुत प्रसंग सुनने को मिला। इस चैनल के अनुसार जिन घरों में रॉक और जॉज नामक पश्चिमी संगीत जितना अधिक बजता है उन घरों में लकड़ी खाने वाले कीड़े उतना अधिक फर्नीचर की लकड़ियां खाने में तेजी दिखाते हैं इन संगीतों का ऐसा ही असर अन्य कीड़ों पर भी होता है।

लेकिन जिन घरों में भारतीय शास्त्रीय संगीत चाहे वह हिन्दुस्तानी शैली हो या कर्नाटक शैली बजता है वहाँ से कीड़े भाग खड़े होते हैं। पश्चिमी वैज्ञानिकों द्वारा किए गए इस शोध का वास्तविक रहस्य तो वैज्ञानिक जानें, पर मोटे-तौर पर ऐसा लगता है कि राक और जॉज के ध्वनि तरंगों की मेल कीडों के काम की आवाज से जरूर है। ■

सूचना प्रौद्योगिकी पर भी संकट

अभी भारत सरकार सूचना प्रौद्योगिकी में दक्ष देशवासियों पर गर्व के साथ ऊँची आशाएँ व्यक्त करती है, लेकिन क्या हार्डवेयर निर्माताओं के संगठन मैन्यूफैक्चरर्स एसोसिएशन ऑफ साफ्टवेयर टेक्नोलॉजी (मेट) के निदेशक विन्नी मेहता के इस कथन से बिल्कुल विपरीत परिस्थिति की जानकारी नहीं मिलती कि सरकार की गलत नीतियों के चलते प्रतिवर्ष १५ से २० सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी कंपनियाँ बंद होती जा रही हैं या अपनी उत्पादन ईकाइयों को दूसरे देशों में ले जा रही हैं।

कहाँ तो सूचना प्रौद्योगिकी के उत्पादों के निर्यात से पाँच अरब डॉलर की आमदनी का लक्ष्य प्राप्त करने की बात उठती है, विदेशी कंपनियों के लिए ठेके पर हार्डवेयर बनाने के कारोबार को २००५ तक पाँच अरब डॉलर तक पहचाने की संभावना व्यक्त की जा रही है और कहाँ विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) के तहत हुए समझौते को लागू करने में हो रही देरी पर नाराजगी भी सामने आ रही है।

इस समझौते के अनुसार २००३ तक सूचना और संचार क्षेत्र से संबंधित उपकरणों पर से आयात शुल्क बिल्कुल खत्म करना पड़ेगा और इसके बाद यदि सीमा शुल्क कम हुआ तो हार्डवेयर उत्पादन के बंद होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। ■

कीटनाशक उत्तम हो तो कैसा?

वर्ष २००० में पूरी दुनिया में एक अनुमाना के अनुसार ३२ बिलियन डॉलर के मूल्य के कीटनाशकों की खपत हुई जिसमें विकासशील देशों में ३ बिलियन डॉलर का कीटनाशक बिका। खाद्य और कृषि संगठन (फाओ) तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन (हू) ने एक संयुक्त विज्ञप्ति में बताया कि विकासशील देशों में घटिया किस्म के ३० प्रतिशत कीटनाशक उपयोग हो रहे हैं। इस पर प्रतिवर्ष ८० करोड़ डॉलर खर्च हो रहा है। अंतरराष्ट्रीय गुणवत्ता के पैमाने पर ये कीटनाशक खरा नहीं उतर रहे। स्पष्ट है कि संयुक्त राष्ट्र की खाद्य और स्वास्थ्य एजेंसियां भारत सहित विकासशील देशों में उपयोग हो रहे घटिया स्तर के कीटनाशकों पर प्रतिबंध चाहेगा। संयुक्त राष्ट्र इस बात पर चिंतित है कि कीटनाशक उत्तम क्यों नहीं है। ऐसी चिंता का एकहल यह हो सकता है कि पर्यावरण मित्र नीम के फल-गोमूत्र में बना हुआ सर्वोत्तम कीटनाशक की अंतरराष्ट्रीय गुणवत्ता के पैमाने पर सबसे ऊपर स्थान देने प्रयत्न संयुक्त राष्ट्र करे अपने रसायनिक कीटनाशकों की बिक्री का प्रपंच नहीं। ■

Scanned with OKEN Scanner

माँ भारती-गुरूकुल संकुल

के अंतर्गत

दीनदयाल शोध संस्थान चित्रकूट द्वारा भूकम्प प्रभावित सौ बालक-बालिकाओं के दायित्व वहन का संकल्प

भूकम्प की महाभीषण विभीषिका ने गुजरात में जनजीवन को तहस-नहस कर डाला है। अपार धन सम्पदा के उपभोग के अभ्यस्थ लोगों को भी सड़क की पटरी पर जिन्दगी काटने वालों की श्रेणी में ला पटका है।

इनकी मदद के लिए दुनियाँ भर से आर्थिक सहायता पहुँच रही है। किन्तु इस दर्दनाक प्राकृतिक प्रकोप के शिकार बनें नन्हें-नन्हें बच्चे अपनी माताओं की गोद से हमेशा के लिए वंचित हो गये हैं। उन्हें अब माँ का प्यार कौन देगा? ममतामय अंतःकरण से उनका पालन-पोषण कौन करेगा? उनके भविष्य को संवारने की जिम्मेदारी कौन निभायेगा?

इस कठिन किन्तु नितान्त आवश्यक कार्य के लिए दीनदयाल शोध संस्थान ने कदम बढ़ाया है। ऐसे सौ बालक-बालिकाओं का सम्पूर्ण दायित्व वहन करने की व्यवस्था चित्रकूट में की जा रही है। यह व्यवस्था ''माँ भारती-गुरुकुल संकुल'' के अंतर्गत है।

इस गुरुकुल संकुल में १०-१० बालिकाएं या बालक एक-एक परिवार के रूप में रहेंगे। प्रत्येक परिवार में अवकाश प्राप्त अध्यापक एवं अध्यापिका (पति-पत्नी) उनके माता-पिता के रूप में काम करेंगे। सौ बच्चों के इन दस गुरुकुल संकुल के प्रबंध का दायित्व निभायेंगे गुजराती मूल के सुयोग्य पति-पत्नी।

पांचवीं कक्षा तक पढ़ायी का माध्यम होगा गुजराती भाषा। छठी से आठवीं कक्षा तक पढ़ायी का माध्यम गुजराती तथा हिन्दी होगा। इसका चयन हर एक बच्चा स्वयं करेगा।

नौंवी कक्षा की पढ़ायी के साथ-साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रारंभ होगा। इसमें कम्प्यूटर प्रशिक्षण भी सम्मिलित है। अँग्रेजी भाषा का भी अभ्यास कराया जायेगा।

प्रत्येक बालक या बालिका स्वावलंबन एवं स्वाभिमान का जीवन यापन करें, यह दीनदयाल शोध संस्थान का लक्ष्य है। इस गुरुकुल में शिक्षित युवक या युवतियाँ नौकरी के सथान परस्वरोजगार का जीवन पसंद करेंगे।

माँ भारती गुरुकुल के सभी बालक-बालिकाओं के विवाह की व्यवस्था गुरुकुल स्वयं करेगा। समाज के सभी घटक परिवारों में जन्म पाते हैं। किन्तु उनमें सामाजिक दायित्व के बोध की भावना के विकास की विधियाँ सामाजिक और राजनीतिक नेताओं के परिवारों में भी प्रचलित नहीं है। फलस्वरूप समाज के घटकों में सामाजिक जीवन दृष्टि का अभाव है। राष्ट्र जीवन की समस्याओं की यही प्रमुख जड़ है। गुरुकुल संकुल में शिक्षित एवं विवाहित युवक-युवतियाँ इस अभाव को दूर कर पारिवारिक जीवन का अनुकरणीय नमूना प्रस्तुत करेंगे।

इस योजना का शुभारंभ सांसद निधि द्वारा किया जा रहा है।

दीनदयाल शोध संस्थान

Scanned with OKEN Scanner

फाल्गुन-चैत्र २०५७-५८ .. डाक पंजीयन संख्या डीएल-१३०२७/२००१ आर. एन. आई. पंजीयन संख्या

ईश्वर दास महाजन द्वारा स्वदेशी जागरण फाऊंडेशन के लिए कुमार ब्रदर्स प्रिंटिंग प्रेस, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२ से मुद्रित एवं ६०, नॉर्थ एवेन्यू

Scanned with OKEN Scanner